भारतीय नवयुव

तरुण-भारत-ग्र

ग्रन्थावली-सं० ६

दिल्ली अथ

...थवा इन्द्रप्रस्थ ।

" नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण "

कालिदास ।

सम्पादक

लक्ष्मीधर वाजपे

[मूल्य ॥) आने ।

* ओ३म् *

संख्या.................

...लय—पञ्जिका—संख्या.........

पुस्तक पर सर्व प्रकार की निशानियां लगाना वर्जित है। कोई महाशय १५ दिन से अधिक देर तक पुस्तक अपने पास नहीं रख सकता। अधिक देर तक रखने के लिये पुनः आज्ञा प्राप्त करनी चाहिये।

भारतीय नवयुवकों द्वारा संचालित
तरुण-भारत-ग्रन्थावली-सं० ६ ।

दिल्ली अथवा इन्द्रप्रस्थ ।

"Empires and nations flourish and decay
By turns command and in their turns obey."

लेखक,
श्रीयुत दत्तात्रेय बलवन्त पारसनीस ।

अनुवादक,
श्रीयुत रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे ।

प्रकाशक,
तरुण-भारत-ग्रन्थावली-कार्यालय,
दारागंज, प्रयाग ।

सं. १९७५ वि.

17/1918

[...त्ति] [मूल्य ॥) आने ।

प्रकाशक,
तरुण-भारत-ग्रन्थावली-कार्यालय,
दारागंज, प्रयाग ।

मुद्रक,
श्रीयुत चिंतामण सखाराम देवळे,
मुंबई-वैभव प्रेस, सर्वेन्ट्स् आफ इंडिया
सोसायटीज् होम, सैंडहर्स्ट रोड,
गिरगांव-बम्बई ।

तरुण-भारत-ग्रन्थावली।

भारतीय तरुणों में नवजीवन का संचार करने के लिए इस ग्रन्थावली में ऐतिहासिक, नैतिक और जीवनचरितसम्बन्धी उत्तमोत्तम ग्रन्थ निकलते हैं। ग्रन्थावलीके स्थायी ग्राहकोंको सब ग्रन्थ पौने मूल्य पर मिलते रहते हैं। प्रवेश-फीस, आठ आना, पहले वी० पी० के साथ लगा ली जाती है।

इस ग्रन्थावलीके ग्रन्थोंका प्रचार करके, इसके स्थायी ग्राहक बढ़ाकर, हमारे इस पवित्र साहित्यकार्यमें सहायता करना प्रत्येक मातृभाषा-हितैषीका कर्तव्य है। इस लिए कृपया आप स्वयं स्थायी ग्राहक बनें; और अपने अन्य मित्रोंको भी बनावें। यह आवश्यक नहीं है कि, स्थायी ग्राहक सब पिछली पुस्तकें लेवें–जो उनको पसन्द हों, वही लेवें–अथवा सब लेवें–यह उनकी इच्छा पर निर्भर है।

अभी तक निम्नलिखित ग्रन्थ निकल चुके हैं:—

अपना सुधार—इस पुस्तकमें शारीरिक, मानसिक और आचरणसम्बन्धी सुधारके अनुभवजन्य उपाय बतलाये गये हैं। जान स्टुअर्ट ब्लैकीके प्रसिद्ध ग्रन्थ "सेल्फकलचर" के आधार पर इसकी रचना हुई है। पुस्तक नवयुवकोंके लिए बहुत ही उपयोगी है। मूल्य छै आने।

फ्रांस की राज्यक्रान्ति—अठारहवीं शताब्दीमें राजकीय अत्याचारों से त्रस्त होकर फ्रांसकी प्रजा ने जो राज्यक्रांति की थी, उसीका मनोरंजक वर्णन इस पुस्तकमें दिया हुआ है। सच्चा इतिहास होने पर भी इसके पढ़ने में उपन्यास का सा आनन्द आता है। राजनैतिक और ऐतिहासिक ग्रन्थोंमें, ऐसी पुस्तक हिन्दीमें अभी तक नहीं निकली है। मूल्य ।।।≈)

महादेव गोविन्द रानाडे—राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और औद्योगिक—चारो विषयोंमें भारतकी उन्नतिके लिए पूर्ण प्रयत्न करनेवाले देशभक्त महात्मा रानाडेका यह सुविस्तृत चरित्र बड़ीही मार्मिक भाषामें लिखा गया है। इसके पढ़नेसे पाठकोंके हृदयमें स्वदेशाभिमान और स्वदेशभक्तिकी ज्योति जागृत हुए बिना नहीं रहती। महात्मा रानाडे और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रमाबाई रानाडेके दो चित्र भी पुस्तकमें यथास्थान दिये हुए हैं। मूल्य ।।।) आने।

एब्राहम लिंकन—जिस महात्माने एक झोपड़ीमें जन्म लेकर अपने उद्योग, साहस, परोपकार और सदाचारके बल पर अमेरिकाके राष्ट्रपति (प्रेसिडेंट) की पदवी प्राप्त की, उसी महात्माका यह स्फूर्तिदायक चरित्र है। इसी महात्माने अमेरिकासे गुलामीकी घृणित प्रथाका सदैवके लिए निर्मूलन किया। अपने देशके लिए अन्तमें अपने प्राण तक दे दिये—ऐसे स्वदेशहितैषी महात्माका चरित्र प्रत्येक भारतीय नवयुवकको अवश्य पढ़ना चाहिए; पुस्तक सचित्र है। मूल्य सिर्फ ।।≈)

ग्रीसका इतिहास—यूरपमें रोम और ग्रीसकी सभ्यता अत्यन्त प्राचीन समझी जाती है। ग्रीसकी सभ्यता तो भारतकी प्राचीन सभ्यतासे बहुत कुछ मेल रखती है। उसी ग्रीस देशकी राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक क्रान्तियोंका मनोरंजक तथा उपदेशप्रद वर्णन इस इतिहास-ग्रन्थमें दिया गया है। ग्रीस देशके उत्थान और पतनसे उपदेश लेकर हमें अपने देशको पतनसे बचाते हुए, बड़ी युक्तिसे, उत्थानके मार्ग पर ले जाना चाहिए। पुस्तक ऐतिहासिक संसारमें बिलकुल नवीन है। मूल्य १≈) आने।

रोमका इतिहास—लेखक-प्रोफेसर ज्वालाप्रसाद एम० ए०। यह महत्वपूर्ण इतिहास भी तैयार हो रहा है।

अन्य पुस्तकें।

ईश्वरीय बोध—महात्मा रामकृष्ण परमहंसके उपदेशोंका संग्रह। मू० ।-)

सफलताकी कुंजी—स्वामी रामतीर्थजीके एक उत्तम उपदेशप्रद व्याख्यानका अनुवाद। मूल्य ।) आने।

हिन्दू जातिका ह्रास—विषय नामहीसे प्रकट है। मूल्य -) आना।

इटलीकी स्वाधीनता—मेजिनी, ग्यारीबाल्डी, इत्यादि ज्वलन्त देशभक्तोंने अपनी मातृभूमि इटलीको परकीय शासनसे मुक्त करके स्वतंत्र कैसे बना दिया, इसका विस्तृत, उपदेशप्रद, और मनोरंजक इतिहास इस पुस्तकमें मिलेगा। पुस्तक भारतीय नवयुवकोंके अध्ययन करने योग्य है। मूल्य छै आने।

स्वदेशाभिमान—अपनी मातृभूमिपर बलिदान होनेवाले अनेक वीरोंकी छोटी छोटी कहानियाँ। यह पुस्तक भारतमाताके प्रत्येक बच्चेके हाथमें होनी चाहिए। मूल्य ।) आने।

व्यवस्थापक,
तरुण-भारत-ग्रन्थावली-कार्यालय,
दारागंज, इलाहाबाद।

निवेदन ।
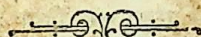
तरुण-भारत-ग्रन्थावलीकी यह छठवीं संख्या हिन्दी-प्रेमियोंकी सेवामें उपस्थित की जाती है। यह पुस्तक मराठीके प्रसिद्ध ऐतिहासिक लेखक रावबहादुर श्रीयुत दत्तात्रेय बलवन्त पारसनीसकी लिखी हुई पुस्तकका अनुवाद है। पारसनीस महाशयने मूल पुस्तक स्वतंत्र रीतिसे तो लिखी ही है; किन्तु साथ ही साथ अनेक इतिहास-अन्वेषक देशी तथा विदेशी विद्वानोंकी सहायता भी ली है, अतएव पुस्तक, छोटी होनेपर भी, साहित्यकी दृष्टिसे, बहुत उपयोगी हुई है।

यह हमारी भारतभूमि पवित्र और ऐतिहासिक स्थानोंका भांडार है। जिस प्रकार धार्मिक तीर्थस्थलों और प्राकृतिक रमणीय स्थानोंकी यहां कमी नहीं है, उसी प्रकार ऐतिहासिक और राष्ट्रीय दृष्टिसे भी हमारे देशके अनेक नगर बहुत ही महत्त्वके हैं। उन सब नगरोंमें "दिल्ली अथवा इन्द्रप्रस्थ" का दर्जा बहुत ही बढ़ा हुआ है। इस नगरने जितने राजकीय परिवर्तन देखे हैं, उतने शायद ही और किसी नगरने इस पृथ्वीतल पर देखे हों! और इसी लिए इस नगरीका इतिहास हमारे लिए बहुत ही मनोरंजक और बोधप्रद है,– यही नहीं; किन्तु एक भारतीय सन्तानके लिए वह अत्यन्त विचारणीय और गम्भीर विषय है! भारतयि साम्राज्य और सभ्यताका वह पूर्व-गौरव, किन किन परिवर्तनोंको देखता हुआ, और आज किस स्वरूपमें आ पहुँचा है–इसका मूर्तिमान चित्र यदि आंखोंके सामने आपको लाना है, तो अनेक राज्यक्रांतियोंसे पूर्ण दिल्लीका इतिहास आपको पढ़ना चाहिए। वह सारा इतिहास विस्तृतरूपसे यद्यपि इस छोटीसी पुस्तकमें आपको नहीं मिलेगा; फिर भी जो कुछ इसमें आपको मिलेगा, उसे पढ़कर आपके हृदयमें, अपनी इस सनातन और पुरातन राजधानीके विषयमें, एक प्रकारकी **सहानुभूतिपूर्ण श्रद्धा** अवश्य जागृत होगी। वह श्रद्धा जागृत

होकर यदि आपके हृदयमें कोई संवेदना उत्पन्न करेगी, तो हम इस ग्रन्थका प्रकाशन सार्थक समझेंगे। परमात्मा ऐसा ही करे!

अन्तमें हम अपने प्रेमी श्रीयुत रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे महाशयको बहुत बहुत धन्यवाद देते हैं कि, जिन्होंने हमारी प्रार्थना पर, बड़े उत्साहसे, तरुण-भारत-ग्रन्थावलीके लिए, यह ग्रन्थ हिन्दीमें प्रस्तुत कर दिया। आप एक उत्साही नवयुवक हिन्दीप्रेमी हैं। परमात्मा आपकी आकांक्षाएं पूर्ण करे!

बम्बई,
पौष शुक्र ११,
सं. १९७५ वि०।

लक्ष्मीधर वाजपेयी।

अनुक्रमणिका।

दिल्ली अथवा इन्द्रप्रस्थ।

पहला प्रकरण।
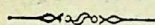
प्राचीन और अर्वाचीन वृत्तान्त।

ऐसा कौन भारतवासी होगा, जिसने कभी दिल्ली शहरका नाम न सुना हो ? सिर्फ भारतवर्षमें ही नहीं, किन्तु समस्त संसारमें जितने इतिहास-प्रसिद्ध नगर हैं, उन सबमें हमारी दिल्लीका दर्जा बहुत ऊँचा है। किसी जमानेमें यह नगर राज-वैभव, कला-कौशल और विद्या-वृद्धि आदि बातोंमें अग्रसर था। यहाँ पर अनेकों राज्य-क्रान्तियाँ हो गईं; और कालचक्रकी विचित्र गतिका प्रभाव जितना यहाँ दृष्टिगोचर हुआ है, उतना अन्यत्र शायद ही हुआ हो। वैसे तो बाबिलोन अथवा बालबेक, पालमिरा अथवा पेर्सिपालिस, अथेन्स, कार्थेज, अथवा रोम, इत्यादि शहर इतिहासमें अनेक राज्यविप्लवों तथा उथला-पथलोंके अग्रस्थान अथवा मानवी नाटककी प्रसिद्ध रंगशालाएँ हैं—तौ भी दिल्लीकी कीर्ति सबमें अद्भुत है। बाबिलोनकी चमत्कार-पूरित लहरानेवाली पुष्पवाटिकाएँ, सालोमन नगरीकी चित्ताकर्षक सुन्दरता, पेर्सिपालिस नगरका अपार प्राचीन वैभव और कार्थेज नगरीका लोकोत्तर ऐश्वर्य, इत्यादि सब बातें आज लुप्तप्राय होगई हैं। यदि हम रोमक-पत्तनके साम्राज्यवैभवको व्यक्त करनेवाले प्राचीन शेष चिन्होंको अपने ध्यानसे अलग कर दें, तो बड़े गर्वसे यही कहना पड़ेगा कि, संसारमें

मूर्तिमंत प्राचीन और अर्वाचीन इतिहास बतलानेवाला नगर सिर्फ दिल्ली ही है। तीन हजार वर्ष तक कालचक्रकी अनन्त लीलाओंको देखकर, फिर भी सब लोगोंके अन्तःकरणोंको अपनी ओर खींच लेनेकी सामर्थ्य इस नगरीमें सचमुच बड़ी विलक्षण है। पांडव, कौरव, अशोक, जैन, विक्रम, चौहान, पठान, मुगल और मराठे आदि सबको सार्वभौमिकता प्राप्त करा देनेका मान इसी नगरने प्राप्त किया था; और उन सबको अपने पदोंमें लीन कर छोड़ा था। केवल यही नहीं, किन्तु सारी पृथ्वीपर अपनी राजसत्ता जमानेवाले अंग्रेज लोगोंको भी इस नगरने मोहित कर लिया है। पौराणिक कालके इन्द्रप्रस्थको मुसलमानी राजत्वकालमें जितनी महत्ता प्राप्त थी, उतनी ही महत्ता उसे मराठोंके शासन-कालमें प्राप्त थी; और ब्रिटिश शासन-कालमें भी यह नगर उतना ही महत्त्व-शाली बना हुआ है। पाण्डवोंका राजसूय यज्ञ, मयासुरकी अपूर्व मय-सभा, शाहजहाँ बादशाहके बहुमूल्य और रत्नजटित मयूरसिंहासनके सामनेवाला आम दरबार, चक्रवर्तिनी देवी विक्टोरियाका 'कैसरे हिन्द' पदका बृहद् दरबार, अथवा भारतके वाइसराय लार्ड कर्जनके द्वारा किया गया राजाधिराज सप्तम एडवर्ड बादशाहके राज्यारोहणका दरबार, चक्रवर्ती सम्राट् पंचम जार्जके राज्यारोहणका अनुपम दरबार, आदिके समान दुर्लभ और प्रेक्षणीय महोत्सव इसी नगरमें हुए हैं! ऐसे विशिष्ट स्थलका वर्णन कौन नहीं सुनना चाहेगा?

दिल्ली शहरके दो प्राचीन नाम, हस्तिनापुर और इन्द्रप्रस्थ, और एक अर्वाचीन नाम, शाहजहानाबाद, प्रसिद्ध हैं। साधारणतया प्राचीन ग्रन्थों और कागजोंमें दिल्लीके लिए उपर्युक्त नामोंका ही प्रयोग किया जाता है। परन्तु आज-कल ये स्थान भिन्न भिन्न हैं; और उनमेंसे कुछका 'नई दिल्ली' और कुछका 'पुरानी दिल्ली' में समावेश होता है। इन्द्रप्रस्थ नामका स्थान 'पुराने किले' के नामसे प्रसिद्ध है। हस्तिना-

पुर नामक स्थान दिल्लीसे अलग है। और, शाहजहानाबाद दिल्ली शहर में शामिल है। कहते हैं कि, पहले दिल्ली बड़ा विस्तीर्ण नगर था। उसकी परिधि ४५ मीलकी थी। इस नगरको इन्द्रप्रस्थका नाम अत्यन्त प्राचीन कालसे मिला है। जनरल कनिंगहमका यह अनुमान है कि, ईस्वी सदीके पन्द्रह सौ वर्ष पहले उत्तरसे आनेवाले आर्य लोगोंने यमुना नदीके सुन्दर प्रवाहको देखकर उसके तटपर इस नगरकी रचना की होगी। महाभारतसे यह मालूम होता है कि, धर्मराज युधिष्ठिरने इस नगरकी सृष्टि की है। इससे यह अनुमान होता है कि, इस नगरकी सृष्टि आजसे ७००० वर्ष पहले हुई होगी। आजकलके ज्योतिष-शास्त्र-विशारदोंके मतानुसार भारतीय युद्धका समय आजसे ७११४ वर्ष पहलेका है। इससे स्पष्ट है कि, इस कालके पहलेसे ही इस नगरका अस्तित्व रहा होगा। कुछ लोगोंका यह मत है कि, जिस समय इन्द्रप्रस्थ नामक नगरी प्रस्थापित की गई थी, उस समय यमुनाका प्रवाह उसके वर्तमान प्रवाहसे भिन्न था। अस्तु; जब कि महाभारतके पहलेकी देश-दशाका विचार करनेके लिए कोई अच्छा साधन उपलब्ध नहीं है, तब फिर यह माननेमें कोई आपत्ति नहीं है कि, इन्द्रप्रस्थकी नगरी पांडवोंके कालसे ही अस्तित्वमें आई।

इन्द्रप्रस्थका राज्य पांडवोंके वंशमें तीस पीढ़ियों तक, यानी लगभग १८५४ वर्ष रहा। * इसके बाद, तीसवीं पीढ़ीके राजा क्षेमक अथवा लखमीदेवके प्रधान वीरसेन अथवा विसर्वने इस राज्यको छीन लिया। उसने तथा उसके वंशजोंने ३४७ वर्ष तक राज्य किया। इसके बाद,

* दिल्लीके राजाओंकी सम्पूर्ण नामावली इस पुस्तकके अन्तमें परिशिष्टरूपसे दी गई है। उसमें पांडवोंसे लेकर मुगल बादशाहोंके अन्त तक समस्त राजाओंके नाम और उनके शासनके समय दिये हैं।

उसके वंशके अन्तिम राजा पृथ्वीपालसे नरहरिनाथ नामक उसके दीवान-ने यह राज्य छीन लिया । इसका राजवंश गौतमके नामसे प्रसिद्ध हुआ । इस वंशके राजाओंके हाथमें यह राज्य ३८९ साल तक रहा । इसके बाद मयूरोंका राज्य हुआ । इस वंशके अन्तिम राजाको मारकर शकादित्यने राज्य छीन लिया । इसके बाद राजपूत लोग राजा हुए । इस प्रकार अनेक वर्षों तक इन्द्रप्रस्थ हिन्दू राजाओंके हाथमें रहा । इसके पश्चात् क्रमशः पठान, मुगल, मराठों और अन्तमें अंग्रेज लोगों-के हाथमें यहांकी सत्ता चली गई । जनरल कनिंगहमका मत है कि, इन्द्रप्रस्थको दिल्ली अथवा दिल्लीपुर नाम ईस्वी सन्के एक शताब्दी पहले प्राप्त हुआ होगा । उन्होंने मुसलमान इतिहास-लेखक फरिस्ताके आधार पर यह प्रतिपादन किया है कि, पहलेका दिल्ली शहर आज कलकी दिल्लीसे ५ मीलकी दूरी पर, जमुना नदीके तट पर, बसा था; और मयूर वंशके दिलू नामक राजासे उसे 'दिल्ली' नाम प्राप्त हुआ । परन्तु इससे भी अधिक विश्वसनीय वृत्तान्त ईसवी सन्की तीसरी अथवा चौथी शताब्दीसे प्राप्त हो सकता है । दिल्लीमें जो एक प्रख्यात लोहस्तंभ है उसपर एक संस्कृत लेख खुदा है । उससे जान पड़ता है कि, धव नामक राजाने अपना प्रताप संसारमें प्रकट करनेके लिए यह लोहस्तम्भ खड़ा किया । जनरल कनिंगहमके मतसे इस लोह-स्तम्भका समय सन् ३१९ ईसवी है । उन्होंने यह अनुमान निकाला है कि, इस समयमें चूंकि कन्नौजका गुप्त नामक राजघराना सत्ताहीन हुआ; अतएव उस समय उपर्युक्त राजाने अपने पराक्रमको व्यक्त करके विजयानन्दसे इस लोहस्तंभको खड़ा किया होगा । परन्तु, फिर पीछेसे इस लोहस्तम्भके संस्कृत लेखका आधार भी रद्द होगया; और परम्परासे चली आई हुई दन्तकथाओंने, आठवीं शताब्दीके तुम्वर अथवा तोमर घरानेके प्रस्थापक राजा बिल्हणदेव उर्फ अनंगपालको, इस लोहस्तम्भका

जनकत्व दिया । दिल्लीमें इस विषयकी अनेक दन्तकथाएं प्रचलित हैं । उनमें एक दन्तकथा इस प्रकार है:—" एक दिन किसी ब्राह्मणने राजासे आकर कहा कि, आपने जो यह स्तम्भ स्थापित किया है उसका सिरा धरतीके भीतर शेषनागजीके मस्तकमें जा लगा है; और आपका यह स्तम्भ खूब दृढ़ हो गया है—अतएव आपका राज्य भी इसी प्रकार दृढ़ रहेगा । जब तक यह स्तम्भ यहां रहेगा तब तक आपका राज्य अबाधित रहेगा; और आपहीके वंशमें बना रहेगा । " राजाको ब्राह्मण-का कथन सच मालूम हुआ; और उसके कथनकी परीक्षा लेनेके लिए उसने उस लोहस्तम्भको उखाड़कर देखनेकी आज्ञा दी । जब वह स्तम्भ उखाड़ कर देखा गया तब उसके निचले सिरेमें सचमुचही खून लगा हुआ दिखाई दिया; क्योंकि स्तम्भ शेषनागके मस्तकमें घुस गया था ! यह देखकर राजाको ब्राह्मणके कथनकी सत्यता पर विश्वास होगया । राजाने उस स्तम्भको फिर गाड़नेकी कोशिश की, परन्तु वह पहलेके समान दृढ़तापूर्वक नहीं गड़ा; किन्तु कुछ ढीला रह गया । वह लोहेकी लाट चूंकि 'ढीली' रही; और इसी लिए उस स्थानको "ढिल्ली" या "दिल्ली" कहने लगे । इसके सिवा और भी कई किंवदन्तियां प्रचलित हैं । टालेमीके ग्रंथमें "दैदल" और "इन्द्रवर" नामके जिन दो पास-पासवाले शहरोंका उल्लेख किया गया है, उनसे "दिल्ली" और "इन्द्रप्रस्थ" के नामोंकी बहुत कुछ समानता है । इसलिए स्पष्ट है कि, ये दो नाम बहुत प्राचीन हैं । कई एक प्राक्कालीन इतिहास-अन्वेषकोंका मत है कि, दिलू अथवा धिलू नामके राजासे ही "दिल्ली" नाम पड़ा है; और विक्रमीय शताब्दीके पहले, यानी ईसवीं सन्के ५७ वर्ष पहलेके लगभग इस नामका प्रचार हुआ । विक्रम राजाके विषयमें हिन्दी भाषामें जो कवित्त प्रचलित हैं उनमें यह उल्लेख है कि, "दिल्लीपति कह्यो"—यानी विक्रमको दिल्लीपति

कहने लगे। सारांश यह है कि, इस शहरका "दिल्ली" नाम बहुत पुराना है।

सन् ७३६ ईस्वीसे दिल्लीके राजाओंका विश्वसनीय हाल मालूम होता है। अनंगपाल तुम्बर वंशका मूल संस्थापक है। सन् ७३६ ईस्वीमें इसका राज्याभिषेक हुआ। उसने पहले पहल दिल्लीमें राज्य किया। इसके बाद उसके वंशज कन्नौजमें गये। वहांसे उन्हें राठोड़ोंके मूल पुरुष चन्द्रदेवने भगा दिया। इसके बाद दूसरा अनंगपाल दिल्लीमें आया; और वहां उसने अपनी राजधानी बनाई। वहां उसने नया शहर बसाया; और उसके आसपास एक भारी कोट बनवाया। कुतुबमीनारके आसपासके हिस्सेमें प्राचीन इमारतोंके जो चिन्ह देख पड़ते हैं वे राजा अनंगपालकी राजधानीके चिन्ह माने जाते हैं। अनंगपालके दिल्लीमें राज्य करनेका समय उपर्युक्त प्राचीन लोहस्तंभ पर इस प्रकार दिया है— "संवत् दिहली ११०९ अंगपाल बही।" इससे यह सिद्ध होता है कि, सन् १०५२ ईस्वीमें राजा अनंगपाल दिल्लीमें राज्य करता था। इसके एक शताब्दीके बाद, यानी तुम्बर घरानेके अन्तिम राजा—तीसरे अनंगपाल—के शासनकालमें, अजमेरके राजा विशालदेव चौहानने दिल्ली जीत ली। इस विजयी राजाने अनंगपालका सर्वथा नाश नहीं किया; किन्तु उसे एक छोटासा राज्य देकर अपना माण्डलिक बना लिया; और उसके घरानेसे बेटीव्यवहार किया। इन दो घरानोंके विवाहसम्बन्धका फल पृथ्वीराज चौहान है। पृथ्वीराज भारतकी हिन्दू स्वतंत्रताका अभिमानी तथा उसकी रक्षाके लिए लड़नेवाला अन्तिम राजा है। उसने दिल्लीमें "रायपिथौरा" नामका एक क़िला बनवाया, और अनंगपालके बनवाये हुए कोटके आसपास एक और भारी कोट बनवाया, तथा ऐसा प्रबन्ध कर दिया कि, जिससे कोई भी शत्रु दिल्ली शहरको न जीत सके। परन्तु भारतवर्षकी स्वतंत्रता पर क्रूर कालकी वक्र

दृष्टि हुई; और पृथ्वीराजका अजेय किला एवं सुदृढ़ कोट कुछ भी काम न दे सका; तथा भारतवर्षकी स्वतंत्रता पृथ्वीराजके शासनकालमें ही रसातलको पहुँच गई ! सन् ११९१ ईस्वीमें शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरीने हिंदुस्तानपर अपना पहला आक्रमण किया । पृथ्वीराजने बड़ी वीरताके साथ उसका सामना किया । यहां तक कि, पृथ्वीराजने उसे थानेश्वरकी लड़ाईमें अच्छी तरह हरा दिया । पृथ्वीराजने शहाबुद्दीनकी सेनाका ४० मील तक पीछा किया, और उसकी नाकमें दम कर दिया । परन्तु दो सालके बाद यह मुसलमानी आफ़त फिर आई; और उसने पृथ्वीराजका पराभव करके उनका वध किया; और दिल्लीका साम्राज्य अपने अधीन कर लिया !

इस प्रकार मुहम्मद गोरीके सेनापति कुतुबुद्दीनने दिल्लीको जीता और वहां मुसलमानी सत्ताका हरा झंडा खड़ा कर दिया । सन् १२०६ ईस्वीमें जब मुहम्मद गोरीका देहान्त हुआ, कुतुबुद्दीन स्वयं दिल्लीके सिंहासनका अधिपति बन बैठा; जोकि भारतके इतिहासमें गुलाम घरानेके प्रस्थापकके नामसे प्रसिद्ध है । आजकल पुरानी दिल्लीके नामसे बस्तीका जो भाग प्रसिद्ध है, वहीं इस बादशाहकी राजधानी; थी जिसके कुछ चिन्ह अभी तक कायम हैं । वहां कुतुबुद्दीनकी एक मसजिद है । उसके प्रवेशद्वार पर जो शिलालेख है उससे यह मालूम होता है कि, सन् ११९३ इस्वीमें इस विजयशाली बादशाहने दिल्लीमें स्वधर्म स्थापन करनेके उद्देशसे यह मसजिद बनवाई । अस्तु । इसी बादशाहने अपने प्रताप-सूर्यको निरंतर लोगोंकी दृष्टिके सामने रखनेके लिए अपने नामपर "कुतुबमीनार" नामका एक प्रचंड विजयस्तम्भ खड़ा किया । यह इमारत इतनी अपूर्व और भव्य है कि, समस्त पृथ्वीके लोकोत्तर चमत्कारोंमेंसे एक चमत्कार मानी जाती है । अस्तु ।

जिस समय दिल्लीमें गुलामोंका घराना राज्य कर रहा था, उस समय

इसी घरानेमें एक राजनीतिज्ञ स्त्री पैदा हुई, जो कि दिल्लीके इतिहासमें पहली राज्यकर्त्री स्त्रीके नामसे मशहूर है । इसका नाम रज़िया बेगम था। जिस तरह हंगरीके देशभक्तोंने यूरुपकी प्रसिद्ध रानी मेरिया थेरिसा का जयजयकार किया, उसी तरह रजिया बेगमकी प्रजाने भी उसका जयजयकार करके उसे "सुल्ताना" की बादशाही पदवी प्रदान की। सन् १२९० ईस्वी तक दिल्लीका राज्य गुलाम वंशके अधीन रहा। इसके बाद जलालुद्दीन खिलजीने अपनी राज्यसत्ता दिल्लीपर प्रस्थापित की। जलालुद्दीनके बाद उसका भतीजा अल्लाउद्दीन खिलजी दिल्लीके तख्त पर बैठा। इसके शासनकालमें मध्य एशियाके मुगल लोगोंने दो बार दिल्लीपर चढ़ाइयाँ कीं, परन्तु उन्हें हार खाकर वापिस लौट जाना पड़ा।

सन् १३२१ ईस्वीमें पुनः दिल्लीमें राज्य-क्रान्ति हो गई; और वहाँके राज्यसूत्र तुगलक घरानेके हाथमें चले गये। इस घरानेके मूलपुरुष गयासुद्दीन तुगलकने दिल्लीके पूर्वकी ओर, चार मीलके अन्तर पर, एक उच्च स्थान पर तुगलकाबाद नामकी एक स्वतंत्र राजधानी बनाई । इस तुगलक नगरीके कोट, और उसके उध्वस्त मार्ग अभी तक दृग्गोचर होते हैं । परन्तु आज-कल उस स्थान पर मनुष्योंकी बस्ती बिलकुल नहीं है। सन् १३२५ ईस्वीमें गयासुद्दीनका देहान्त हो गया; और उसके पश्चात् मुहम्मद तुगलक सिंहासन पर बैठा। इसने अपनी राजधानी दिल्लीसे उठाकर देवगिर अथवा दौलताबाद ले जानेका तीन बार प्रयत्न किया। सन् १३४१ ईस्वीमें इब्नब टुटा नामका तुर्किस्तानका एक प्रवासी इस बादशाहके दरबारमें आया था। उसने इस बादशाहकी राजधानी का ठीक ठीक वर्णन किया है । उसमें उसने उस नगरकी निर्जन दशा, वहाँकी भव्य इमारतों तथा अन्य कलाकौशलके कार्योंका अच्छा चित्र खींचा है। फीरोजशाह तुगलकने फिर एक बार दिल्लीसे अपनी

राजधानी उठाई; और फीरोजाबाद नामका एक शहर बसाया। आज-कल जहाँ पर हुमायूँ बादशाहकी कबर स्थित है, वहीं यह शहर था; और वहाँ पर अभी तक उसके राज-प्रासादके शेष चिन्ह दृष्टिगोचर होते हैं। इस राज-प्रासादके दक्षिणी-द्वारके समीप चक्रवर्ती राजा अशोकका विजयस्तम्भ दीख पड़ता है, जो कि सन् ईसवीके तीन सौ वर्ष पहलेका है। इस स्तम्भकी उँचाई ४२ फीट है; और लोग इसे 'फीरोजशाह-की लाट' कहते हैं। इस पर पाली भाषामें लिखा हुआ राजा अशोकका शिला-लेख है। फीरोजशाहने इस स्तम्भको यमुना नदीके तीर पर खिज-राबाद नामक स्थानसे लाकर यहाँ खड़ा किया। इस विजयस्तम्भसे फीरोजशाहकी राजधानीके स्थलका ठीक ठीक पता चल जाता है।

सन् १३९८ ईस्वीमें, महमूद तुगलकके शासन-कालमें तैमूरलंगने दिल्लीपर आक्रमण किया। उस समय यह महमूद तुगलक गुजरातमें भाग गया; और उसकी सेनाने बे-तरह हार खाई। समस्त दिल्ली नगर द्रव्यलोभी तैमूरके भयंकर पंजोंमें फँस गया। उस समय लगातार पन्द्रह दिनों तक दिल्लीमें लूटमार और मारकाट होती रही। इसके बाद उस नराधम नर-पिशाचकी तृषा शान्त हुई, और वह असंख्य द्रव्य तथा करोड़ों गुलाम साथ लेकर स्वदेशको लौट गया! तैमूरके दिल्लीसे लौट जानेके बाद दो महीने तक वहाँ राजसत्ताका नाम तक न रहा था। सारा नगर उध्वस्त होकर बेचिराग हो गया था। महमूद तुगलक पुनः वहाँ आया; और उसने अपनी राजधानीके गत वैभवको फिरसे स्थापित करनेका थोड़ासा प्रयत्न किया। परन्तु सन १४१२ ईस्वीमें उसकी मृत्यु हो गई; और उसके साथ तुगलक घरानेका भी अन्त हो गया। आगे चलकर कुछ समय तक, यानी सन १४४४ ईस्वी तक, दिल्लीमें सैयद घराने ने राज्य किया। इसके बाद लोदी घरानेका राज्य आया। उन्होंने दिल्लीसे अपनी राजधानी उठाकर आगरे

में प्रस्थापित की; और उसीको अपना निवासस्थान बनाया। इस घराने के अन्तिम बादशाह इब्राहीम लोदी पर सन् १५२६ ईस्वीमें तैमूर के छठवें वंशज बाबरने आक्रमण किया। पानीपतके विख्यात रण-स्थल पर दोनोंमें घनघोर संग्राम हुआ। परिणाम यह हुआ कि, बाबरने इब्राहीमको हटा दिया। उसने दिल्लीको जीत लिया; और वहाँ मुगल बादशाहतकी नींव डाली। यह बादशाहत सन् १५२६ ईस्वीसे लेकर अन्त तक कायम थी।

यद्यपि बाबर बादशाहने दिल्लीको जीतकर वहाँ अपना राज्य प्रस्थापित कर दिया था, तथापि उसने वहाँ अपनी राजधानी न बनाई। वह सदा आगरेमें रहा करता था; और वहीं सन् १५३० ई० में उसका देहान्त हुआ। यह बादशाह बड़ा विद्वान् एवं उत्तम कवि था। उसने तुर्की भाषामें स्वयं अपना मनोरंजक "आत्मचरित" लिख रक्खा है। मुगल बादशाहत तो लुप्त होगई, परन्तु बाबरका लिखा हुआ आत्मचरित अभी तक कायम है; और उसकी कीर्तिगाथा गा रहा है। मि० बिवरीज नामके एक अंग्रेज महाशयने इस ग्रंथके बारेमें लिखा है कि, "बाबरका आत्मचरित उन अमूल्य ग्रन्थोंमेंसे है, जिनकी महत्ता सर्वकाल अबाधित रहेगी; और उसकी योग्यता सेन्ट आगस्टाइन तथा रूसोके आत्मचरितों अथवा गिबन और न्यूटनके चरितलेखोंके समान ही है। एशियाखंडमें इसके समान ग्रन्थ केवल यही एक है।"*

इन शब्दोंसे बाबरके आत्मचरितका महत्त्व प्रकट हो जाता है। इस लिए इस ग्रन्थके सम्बन्धमें रसिक अंग्रेज विद्वानोंका यह कौतुकपूर्ण

* His autobiography is one of those priceless records which are for all time, and is fit to rank with the confessions of St. Augustine and Rousseau, and the memoirs of Gibbon and Newton. In Asia it stands almost alone."

—*Calcutta Review, 1897.*

कथन बिलकुल सच है कि, "बाबरके घरानेकी राजसत्ताका नाश होने पर भी, कालकी वक्र-दृष्टिकी तनिक भी परवा न करते हुए, बड़े गर्वसे यह कहते हुए, कि 'देखो, मैं ज्यों का त्यों अभी तक कायम हूँ,' मानो यह ग्रन्थ कालका ही उपहास कर रहा है!" *

बाबरकी मृत्युके पश्चात् उसका पुत्र हुमायूँ मुगल बादशाहतका अधिपति हुआ। उसने दिल्लीमें पुनः राजधानी बनाई; और इन्द्रप्रस्थकी प्राचीन भूमि पर एक किला निर्माण किया। वह अभी तक 'पुराना किला' के नामसे प्रसिद्ध है। सन् १५४० ईस्वीमें अफगान मंत्री शेरशाहने हुमायूँको भगा दिया; ओर स्वयं दिल्लीका बादशाह बन बैठा। उसने दिल्लीके चारों ओर फिर एक भारी शहरपनाह बनवाया। इस प्रचंड किलेबन्दीका 'लालदरवाजा' नामक एक चिन्ह अभी तक शेष रह गया है। शेरशाहकी मृत्युके बाद उसका बेटा सलीम गद्दी पर बैठा। उसने सलीमगढ़ नामक एक किला बनवाकर अपना नाम अजरामर कर लिया है। सन् १५५५ ई० में हुमायूँ बादशाहने फिर दिल्ली पर चढ़ाई करके अपना राज्य वापिस ले लिया। परन्तु छः महीनेके भीतर ही उसकी मृत्यु हो गई। दिल्लीमें उसकी कबर बड़ी प्रसिद्ध है; और वह उत्तम कलाकौशलका दर्शनीय स्थान है। हुमायूँ बादशाहके पश्चात् उसका पुत्र अकबर दिल्लीके सिंहासन पर आरूढ़ हुआ।

अकबर दिल्लीके समस्त बादशाहोंमें उत्तम था। उसकी गणना बहुत अच्छे राजाओंमें की जा सकती है। उसकी उत्तम राज्यव्यवस्था, न्याय-निपुणता, प्रजाहितदक्षता, आदि बातें प्रसिद्ध ही हैं। परन्तु इन

---

* The power and pomp of Babar's dynasty are gone; the record of his life–*the Littera Scripta* that mocks at time–remains unaltered and imperishable."

—*S. Lane-poole.*

गुणोंके अतिरिक्त, उसमें सब प्रकारके धर्मोंके साथ सहिष्णुता (Toleration) रखनेका गुण अत्यन्त प्रशंसनीय था । उसने सब धर्मके लोगोंके साथ समभावसे वर्त्ताव किया । इसलिए सब जाति और धर्मके लोग उसका धन्यवाद गाते रहे । इस बादशाहको विद्वानोंसे बड़ा प्रेम था । उसके दरबारमें फैजी, अबुल फजल, आदि बड़े नामी पंडित थे । अकबरने इन विद्वानोंसे महाभारत, रामायण, इत्यादि पौराणिक ग्रन्थोंका तथा बीजगणित, लीलावती, इत्यादि गणितशास्त्रके ग्रन्थोंका फारसी भाषामें अनुवाद कराया । इसके अतिरिक्त, उसकी सभामें ब्राह्मण, यहूदी, पारसी और ईसाई आदि धर्मोंके विद्वान् पंडित थे । इन सब धर्मोंके तत्त्वोंको जानकर उसने यह धर्मसिद्धान्त निश्चित किया था कि,

"There was no god but God, and that Akbar was his Calif."

अर्थात् संसारमें एक परमेश्वरके सिवा दूसरा जगन्नियन्ता नहीं; और उस परमेश्वरके धर्मका शासन करनेवाला सिर्फ अकबर है । उसने गौहत्या बन्द कर दी, हिन्दू और मुसलमानोंको एकताके सूत्रमें बद्ध किया, और स्वयं जोधपुर तथा जयपुरके राजपूत राजाओंकी कन्याओंसे ब्याह करके उनके अन्तःकरणमें अपने प्रति प्रेम-भाव उत्पन्न कर दिया । उसके शासनकालका आदर्शरूप ग्रन्थ "आईने अकबरी" बहुत प्रसिद्ध है । इस ग्रन्थसे यह अच्छी तरह मालूम हो जाता है कि, अकबरके शासन-कालमें कौन कौनसे सुधार हुए थे । उसके शासन-कालमें दिल्लीके सिंहासनको जो महत्त्व प्राप्त हुआ था वह दूसरे किसी भी बादशाहके शासन-कालमें प्राप्त नहीं हुआ । दिल्लीके बादशाहके लिए, पूज्यभाव और आदरका दर्शानेवाला 'दिल्लीश्वर' नामक जो विशेषण प्राप्त हुआ है, उसका आरम्भ इसी सर्वश्रेष्ठ सद्गुणसम्पन्न नृपतिसे हुआ । बर्नियर और परचास नामक यूरोपियन प्रवासियोंने अपने प्रवास-वृत्तान्तोंमें अकबरके

बारेमें बहुत प्रशंसापूर्ण लेख लिखे हैं । उनका आशय यह है कि, अकबर बादशाह अत्यन्त सुस्वभावी था। उसका राजतेज बड़ा विलक्षण था। उसके शत्रु उसके प्रतापके आगे भयभीत होते थे, परन्तु दीनजनोंके लिए उसके अन्तःकरणमें दयाका भारी स्रोत बहता था; और उनके लिए वह एक सुगम आश्रयस्थान था । कलाकौशलकी ओर उसका बड़ा ध्यान रहता था; और वह प्रजा-पालनको ही अपना एक मात्र कर्तव्य समझता था। इस प्रकार विदेशियों तक ने जब उस नृपतिकी इतनी प्रशंसा गायी है, तब यदि वह हमारे संस्कृत कवियोंके वर्णनका भी एक प्यारा विषय बन गया, तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं । अकबरके बारेमें संस्कृत कवियोंका इस प्रकार वर्णन पाया जाता है:—

हस्ताम्भोजमाला नखशशिरुचिरश्यामलच्छायवीचिः ।
तेजोग्नेर्धूमधारा वितरणकारिणो गण्डदानप्रणाली ॥
वैरिश्रीवेणिदण्डो लवणिमसरसी बालशैवालवल्ली ।
वेल्लत्यम्भोधरश्रीरकबरधरणीपालपाणौ कृपाणः ॥ १ ॥

वीर त्वं कार्मुकं चेदकबर कलयस्युग्रटंकारघोषं ।
दूरे सद्यः कलंका इव धरणिभृतो यान्ति कंकालशेषाः ॥
शंकापन्नश्च किं कारणमिति मनसा भ्रांतिपंकायितेन ।
त्यक्त्वाहंकारमंकाद्विसृजति गृहिणी किं च लंकाधिनाथः॥२॥

कर्णाटं देहि कर्णाधिकविधिविहितत्याग लाटं ललाट-।
प्रोत्तुंग द्राविडं वा प्रचलभुजबलप्रौढिमागाढराढम् ॥
प्रस्फूर्जद्गुर्जरं वा दलितरिपुवधूगर्भवैदर्भकं वा ।
गाजी राजीवदृष्टे कुशशतमथवा शाहजल्लालुदीन ॥ ३ ॥

गाजीजल्लालुदीन क्षितिपकुलमणे द्राक्प्रयाणे प्रतीते ।
प्रेयस्यः प्रारभन्ते तरलतरगतिर्व्याकुला मंगलानि ॥
नेत्राम्भःपूर पूर्णस्तनकलशमुखन्यस्तबालप्रवालाः ।
स्त्रयुट्यन्मुक्ताकलापच्युतकुचकुसुमच्छद्मनाकीर्णलाजाः ॥४॥

इस वर्णनसे अकबरकी योग्यता व्यक्त होती है।

सन् १६०५ ईस्वीमें, अकबरकी मृत्युके बाद, उसका पुत्र 'जगज्जेता' जहाँगीर दिल्लीके सिंहासन पर आरूढ़ हुआ। अकबर बादशाह और जहाँगीर, दिल्लीमें अधिक न रहकर, मुख्यतः आगरा, अजमेर और लाहोरमें रहा करते थे। इस लिए उनके शासन-कालमें दिल्लीकी महत्ता वर्णन करने योग्य न बढ़ी। परन्तु सन् १६२७ ई० के बाद जब जहाँगीरका बेटा शाहजहाँ दिल्लीके तख्त पर बैठा, तब उसने दिल्लीको अपूर्व शोभा प्राप्त कराई--उसने उसे एक अद्वितीय नगर बना दिया। इस बादशाहको भव्य और सुन्दर इमारतोंका बेहद शौक था। इस लिए इसने दिल्लीमें 'शाहज़हानाबाद' नामक एक नया शेहर बसाया। आजकल जिसे 'नई दिल्ली' कहते हैं, वह इस बादशाहके लहरी स्वभावका दर्शक है। दिल्लीका किला; उसके भव्य, रमणीय तथा नेत्रानन्ददायक राज-प्रासाद, वहाँकी जुम्मा मसजिद और जमनाकी नहर, इत्यादि अनेक काम इसी बादशाहके शासन-समयमें हुए हैं। इन सुन्दर और दर्शनीय इमारतोंके अतिरिक्त इस बादशाहने आगरेमें अपनी प्राणप्रिय रानीके स्मरणार्थ जो अपूर्व इमारत खड़ी की है, उसकी बराबरी संसारकी एक भी इमारत न कर सकेगी। आगरेके 'ताजमहल' का सिर्फ नामोच्चार करते ही ऐसा मालूम होने लगता है, मानो सारी कुशलताकी परमावधि करके संसारकी अखिल सुन्दरता यहाँ भर दी है। इसी बादशाहने रत्नजटित मयूरसिंहासन बनवाकर अपने अपार वैभवसे समस्त राष्ट्रोंके नेत्रोंको चकाचौंधमें डाल दिया था।

इस बादशाहके पश्चात् औरंगजेब दिल्लीका अधिपति हुआ। यह बड़ा धर्म-विक्षिप्त मनुष्य था; और इसे समस्त भारतवर्षमें मुसलमानी धर्मके प्रचार करनेकी महत्त्वाकांक्षा बहुत ही सताती रहती थी। इसके धार्मिक अत्याचार और अत्यन्त लोभके कारण सारी प्रजा त्रस्त होगई।

इसीके शासन-कालमें हिन्दू-धर्माभिमानी छत्रपति श्रीशिवाजीमहाराज महाराष्ट्रमें उदय हुए; और उन्होंने एक स्वतंत्र राज्यकी स्थापना की। औरंगजेबका सारा जीवन मुख्यतः दक्षिणमें मराठों तथा बीजापुर और गोलकुंडाके बादशाहोंसे लड़ने-झगड़नेमें ही व्यतीत हुआ; जिससे वह दिल्लीके वैभवको विशेष रूपमें नहीं बढ़ा सका। औरंगजेब बादशाहने छत्रपति शिवाजी महाराजको एकबार दिल्लीमें लाकर कैद किया; जहाँसे उन्होंने बड़ी युक्तिके साथ अपना छुटकारा कर लिया। इस इतिहास-प्रसिद्ध घटनासे मराठोंकी दिल्लीसे विशेष पहचान होगई। सन् १७०७ ईस्वीमें औरंगजेब हताश होकर मर गया, और उसके पश्चात् मुगल बादशाहतका सूर्य अस्त होने लगा।

औरंगजेबके बाद जो जो बादशाह दिल्लीके सिंहासन पर अधिष्ठित हुए, उनमें समस्त साम्राज्यको अपने अधीन रखनेका पराक्रम न था, अतएव दिल्लीपतिकी सत्ता विगलित होगई; और "जिसकी लाठी उसकी भैंस" की कहावतके अनुसार सरदार लोग सर्वसत्ताधारी बनकर राज्यकार्य करने लगे। दिल्लीके दरबारमें परस्पर मत्सर, राज्यतृष्णा और अधिकारलालसाका साम्राज्य फैल जानेसे अन्य लोगोंको वहाँ प्रवेश करनेका अवसर मिल गया। मराठोंके मुख्य प्रधान बालाजी विश्वनाथ और उनके पुत्र बाजीराव पेशवाने दिल्ली पर चढ़ाइयाँ कीं, और वहाँके नामधारी बादशाहोंसे मराठोंके लिए "चौथ" तथा "सरदेशमुखी" की सनदें प्राप्त कर लीं। सन् १७३९ ईस्वीमें दिल्लीकी सम्पत्ति पर जलनेवाला ईरानका बादशाह नादिरशाह दिल्ली पर चढ़ आया। उसने बड़े विजयानन्दसे मुगल राजधानीमें प्रवेश किया, और तीन सदियोंके पहले तैमूरलंगने जो लूटमार और मार-काट की थी, उसका स्मरण मानो फिरसे जागृत करनेके लिए नादिरशाहने दिल्लीमें वही दृश्य आरम्भ कर दिया। लगभग ५८ दिनों तक दिल्लीमें अमीर और गरीब

दोनों बराबर लूटे जा रहे थे। अन्तमें जब दिल्लीके लोग बिलकुल निर्धन और त्रस्त होगये, तब नादिरशाहने लूट-मार बन्द की। एक मुसलमान इतिहासकारका अनुमान है कि, जिस समय नादिरशाह स्वदेशको लौटा, उस समय वह अपने साथ नौ करोड़की सम्पत्ति लेगया था। दिल्लीकी बादशाहतके बिलकुल कमजोर हो जानेके कारण, उस पर आक्रमण करके उसे हस्तगत करने, और पूर्व-कालके इन्द्रप्रस्थका जीर्णोद्धार करके, उस पवित्र स्थान पर हिन्दू राज्यकी पुनः स्थापना करनेके उद्देश्यसे मराठोंने शीघ्र ही अपना ध्यान दिल्लीकी ओर आकृष्ट किया। परन्तु मराठोंसे हार खाकर अपनी बादशाहत गमाना दिल्लीके नामधारी बादशाह तथा उसके सूत्रधारी राजनीतिज्ञोंको इष्ट नहीं था; अतएव उन्होंने अहमदशाह दुर्रानीकी सहायता लेकर पानीपतके रण-स्थलमें मराठोंसे भयंकर लड़ाई छेड़ दी। दुर्भाग्यवश इस लड़ाईमें मराठोंका पूर्ण पराभव होगया; और उनके समस्त रथी और महारथी नष्ट होगये। इन्द्रप्रस्थके राज्यकेलिए कौरवों और पाण्डवोंका जिस तरह भारतीय युद्ध हुआ, उसी तरह दिल्लीके तख्तके लिए यह पानीपतका संग्राम है। इस युद्धमें अपरिमित हानि होनेके कारण मराठोंका राष्ट्र कुछ कालके लिए उत्साहशून्य होगया। परन्तु किसी कविकी इस उक्तिके अनुसार, कि "काटा हुआ वृक्ष और भी जोरसे उठता है," वह राष्ट्र फिर उत्साहपूर्वक उन्नतावस्थाको प्राप्त होगया; और महादजी सेंधिया इत्यादि महाराष्ट्र वीरोंने मुगल और रुहेलोंसे बदला लेकर, दिल्लीके बादशाह शाहआलमको अपने अधीन कर लिया; और सन् १७७१ ई० में इन्द्रप्रस्थपर हिन्दू साम्राज्यका झंडा फिर एक बार फहराकर, अपने हाथसे उस बादशाहको सिंहासन पर बैठाया। सन १७८९ ईस्वीमें गुलाम कादिर और महादजी सेंधियाका युद्ध हुआ; जिसमें महादजीने दिल्लीपतिको खुश कर दिया; और उससे पेशवाओंके लिए एक बहुत बड़ा अधिकार

और स्वयं अपने लिए आलीजाह बहादुरकी पदवी प्राप्त कर ली। इस समयसे दिल्लीमें मराठोंकी पूर्ण सत्ता जम गई; और दिल्लीकी रक्षाके लिए वहाँ मराठोंकी एक सेना रहने लगी। महादजी सेंधियाके दामाद लाडोजी शितोले देशमुख कुछ काल तक स्वयं दिल्लीके सूबेदार थे। ग्वालियरमें शितोलोंको 'राजराजेन्द्र रुस्तमे जंग बहादुर' की जो पदवी चली आरही है, वह दिल्ली-विषयक मराठोंकी प्रभुता बतलाती है।

निस्सन्देह महादजी सेंधियाके जमानेमें दिल्लीके पदपर मराठोंका पूर्ण अधिकार होगया; परन्तु इसके बाद बहुत जल्द मराठोंकी सत्ताका ह्रास होने लगा; और आगे चलकर शीघ्र ही अँग्रेजोंकी प्रबलता बढ़ गई। उनकी सेनाने दिल्लीमें दौलतराव सेंधियाका पूर्ण पराभव कर दिया; और सन् १८०३ ईस्वीके मार्च महीनेकी चौदहवीं तारीखको लार्ड लेकने दिल्लीपर अपना अधिकार जमाकर वहाँके बादशाहको अपने आश्रयमें लेलिया। आगामी वर्ष (यानी सन् १८०४ ई० में) यशवन्तराव होल्करने दिल्लीपर चढ़ाई करके वहाँके अँगरेज रेजीडेंट कर्नल (आगे चलकर सर डेविड) आक्टरलोनीसे टक्कर दी, और उससे दिल्ली छीन लेनेका प्रयत्न किया। परन्तु उस समय लार्ड लेककी सहायता उसे तत्काल प्राप्त हो जानेके कारण वहाँसे अँग्रेजोंकी सत्ताका नाश नहीं हुआ। उस समयसे अँग्रेजोंने दिलीके बादशाहके नाम पर राज-कारबार चलाना आरम्भ कर दिया।

सन् १८०४ ईस्वीमें दिल्लीमें अँग्रेजोंकी राजसत्ताके आरम्भ हो जानेके बाद दिल्लीका बादशाह सिर्फ नामधारी-बादशाह रह गया; वह अँगरेजोंके हाथका कठपुतला बन गया; और दिल्लीके किलेमें तथा वहाँके राजप्रासादोंमें ही उसकी सत्ता चलने लगी। सन् १८०६ ईस्वीमें दूसरे शाहआलमका शरीरान्त हुआ; और उसके अनन्तर अकबरशाह दिल्लीके नामधारी सिंहासनका अधिष्ठाता हुआ। इसे अँग्रेजोंसे १५ लाख रुपये

वार्षिक पेन्शन मिलती थी । इसके शासन-कालमें बिशप हिबर नामक एक यात्री दिल्ली आया था । उसने उस समय बादशाहसे भेट की थी। उसने बादशाहके बारेमें इस प्रकार उल्लेख किया है:—"अकबरशाहके चेहरेसे उसकी अवस्था लगभग ७४।७५ वर्षकी मालूम होती थी। परन्तु उसकी यथार्थ उम्र ६३ वर्षकी होगी । परन्तु हिन्दुस्थानमें इतनी उम्र बहुत समझी जाती है । उसका स्वभाव बड़ा अच्छा था; और उसकी वृत्ति बिलकुल शान्त रहती थी । उसकी बुद्धि साधारण थी; परन्तु उसमें शिष्टाचार और आदर-कुशलता विशेष थी ।" यह बादशाह सन् १८३७ ईस्वीमें परलोक सिधारा; और उसके बाद उसका बेटा बहादुरशाह सिंहासनारूढ़ हुआ । उसे कवितासे बड़ा प्रेम था; और वह स्वयं कवि था । उसकी कितनीही कविताएँ अभी तक प्रसिद्ध हैं । इसके शासन-समयमें दक्षिणके सरदार रघुनाथराव विंचूरकर दिल्ली गये थे । उनके प्रवास-वृत्तान्तमें दिल्लीसे सम्बन्ध रखनेवाला यह उल्लेख है—"दिल्ली बहुत बड़ा और विस्तीर्ण शहर है । सारे शहरके चारों ओर भारी कोट है; और यमुना नदीके किनारे बादशाही किला बना हुआ है । वहाँ बहादुरशाह नामका एक बादशाह रहता था । किलेके बाहरी दरवाजे पर यूरोपियन लोग रहते थे; और उन्हींके हाथमें उस दरवाजेका सारा प्रबन्ध था । किलेमें बादशाही महल हैं । उन सब पर गुम्बज हैं; और उनपर सुवर्णके पत्र जड़े हुए हैं । किलेमें बहुत बढ़िया इमारतें हैं, और बादशाहके दरबार के लिए एक बृहत् स्थान है । वहाँ पर तख्त रखने के चबूतरे पर एक पत्थर का सिंहासन था । वहाँके लोग कहते हैं कि, पहले इस चबूतरे पर रत्नजटित सिंहासन रहता था । यह स्थान संगमर्मर पत्थरसे अत्यन्त ही सुशोभित निर्म्माण किया गया है । वहाँकी दीवारों पर सुनहली बेलबूटे निकाले गये हैं। यहाँ पर पहले ठौर ठौर पर रत्न जड़े थे, जिनके चिन्ह अभी तक दिखाई

देते हैं। किलेमें एक बड़ा बाग है, जिसमें बादशाहके रहनेके महल तथा उसका जनानखाना है। इन इमारतोंको छोड़कर बाकी स्थान देखनेकी जिन्हें इच्छा हो, वे वहाँकी आज्ञा लेकर उनको देख सकते हैं। शहरके रास्ते अच्छे हैं; और उनके दोनों ओर उत्तम इमारतें बनी हुई हैं। वहाँ अनेकों जातिके व्यापारी रहते हैं; और उनका व्यापार भी खूब चलता है। शहरसे जमनाकी नहर बह रही है। उसपर कहीं कहीं घाट बँधे हैं; और इधरसे उधर जानेके लिए थोड़े थोड़े अन्तर पर पुल बने हैं। इस सारी शोभाका अवलोकन कर मनुष्य चकित हो जाता है। शहरमें अनेक प्रकारकी तारकशी और नक्काशीकी कई अच्छी अच्छी चीजें मिलती हैं। शहरमें जुम्मा मसजिद नामका मुख्य स्थान है। इस स्थानपर जानेके लिए हिन्दुओंको मनाही है। मसजिदके बाहर सायं-कालको उत्तम प्रकारके कपड़ोंका व्यापार होता है; और अनेक प्रकारके पक्षी बिकनेके लिए आते हैं। वहाँ चाँदनी चौक नामक एक स्थान है, जहाँ जवाहिरोंका सौदा होता है। शहरमें प्रायः मुसलमान ही अधिक हैं। सिर्फ किलेमें ही बादशाह की हुकूमत उस समय चलती थी; और बादशाहके द्वारा नियुक्त किये गये कर्म्मचारी वहाँके झगड़ोंका निबटेरा किया करते थे।" इस वर्णनसे जान पड़ता है कि, बहादुरशाहके जमाने तक दिल्ली शहरका व्यापार और वैभव पूर्णरूपसे नष्ट नहीं हो पाया था; किन्तु थोड़ाबहुत अवश्य कायम था।

कम्पनी-सरकारने दिल्लीपर अपना अधिकार जमाकर वहाँके बाद-शाहको अपने अधीन कर लिया था, तथापि बादशाहकी इज्जत और प्रतिष्ठामें उसने कुछ भी न्यूनता नहीं होने दी थी। सारे हिन्दुस्थानका राज्य-प्रबन्ध दिल्लीके बादशाह बहादुरशाहके मातहत रहकर किया जाता था। इस बादशाहका बड़प्पन कैसा रखा गया था—इसका वर्णन एक ग्रन्थ-कारने बहुतही अच्छा किया है। वह कहता है:—

"Bahadur Shah is really a king; not merely by consent of the Honourable Company, but actually created such by their peculiar letters patent. Lord Lake found the grandfather of the present sovereign and Emperor, in rags, powerless, eyeless, and wanting the means of sustaining existence. The firmans of the Padshahah made the General an Indian noble; the sword of the latter made the descendant of Tamerlane a Company's King, the least dignified, but the most secure of eastern dominations. In public and private, Bahadur Shah receives the signs of homage which are considered to belong to his pre-eminent station. The representative of the Governor-General, when admitted to the honour of an audience addresses him with folded hands in the attitude of supplication. He never recieves letters, only petitions and confers an exalted favour on the Government of the British India by accepting a monthly present of 80,000 Rupees. In return he tacitly sanctions all our acts; withdraws his royal approbation from each and all our native enemies, and fires salutes upon every occasion of a victory achieved our troops. Though he may not have been served with all the zeal inspired by that line of Sadi,—'should the prince of noonday say, it is night, declare that you behold the moon and stars;'—he was suffered, however to believe that he was, the lord of the world, master of the universe, and of the Honourable East India Company, King of India and of the infidels, the supe

rior of the Govenor-General, and proprietor from sea to sea."—*Travels of a Hindoo*-Page 343.

इसका आशय यह है कि, "बहादुरशाह यथार्थमें राजा है। वह कम्पनीकी आज्ञानुसार राज्य नहीं करता, किन्तु कम्पनीकी सनदोंके कारण वह उसके अधीनसा प्रतीत होता है । लार्ड लेकने वर्तमान राजाके पितामह को अशक्त, निर्धन, नेत्र-हीन और निराश्रित पाया था । बादशाहके फरमानके कारण ही जनरल लेक हिन्दुस्थानी उमरावोंमें शामिल किया गया । इधर जनरल लेककी तलवारने तैमूरलंगके वंशज बहादुरशाहको कम्पनीका राजा बनाया । भारतका राज्य प्रतिभा-शून्य, परन्तु सुदृढ़ और सुरक्षित है । सर्वत्र हाट और ख़ासमें बहादुरशाह इज्जतका पात्र है । गवर्नर जनरलका प्रतिनिधि उसके सामने हाथ जोड़कर नम्रता-पूर्व्वक खड़ा होता है । उसकी सेवामें जो कागजात पेश किये जाते हैं वे दरख्वास्तके बतौर ही दिये जाते हैं । अँग्रेजी राज्यमें उसको एक महीने में चालीस हज़ार रुपयेका नजराना मिलता है । उसके एवजमें बादशाहकी सदा कृपा-दृष्टि रहती है । कम्पनीके जितने कानून उसके सामने आते हैं उन्हें वह पास कर देता है । वह सदा कम्पनीका पक्ष लेता है । बादशाह सदा हमारे देशी शत्रुओंसे भी नाराज रहता है । हमारी सेनाकी विजय पर वह आनन्द मानता है । यद्यपि सादी की यह उक्ति कि—अगर राजकुमार दिनको रात कहे तो तुम्हारा कर्तव्य है कि, तुम भी कह दो, हाँ, हुजूर रात जरूर है; यही नहीं किन्तु चन्द्रमा और तारागण भी दृष्टिगोचर हो रहे हैं—बहादुरशाहके लिए अक्षरशः चरितार्थ नहीं होती, तो भी अंशतः वह उसपर अवश्य घटाई जा सकती है । उसको यह विश्वास दिलाया गया था कि, वह सार्वभौम पृथ्वीपति है; और ईस्ट इंडिया कम्पनीका स्वामी तथा समुद्रके एक सिरेसे दूसरे सिरे तकका अधिपति है ।"

तात्पर्य यह कि, ईस्ट इण्डिया कम्पनीने पहलेसेही दिल्लीके बादशाहसे जो बर्त्ताव रखा था, उससे उसके अन्तःकरणमें कोरी बड़ाईका यह व्यर्थ विचार समा गया था कि, मैं सार्वभौम चक्रवर्त्ती राजा हूँ; और ईस्ट इंडिया कम्पनी मेरी नौकर है। अतएव उसे यदि यह इच्छा हुई कि, सार्वभौमत्व स्थिर रहे, और मेरी इज्जत इसी तरह सतत बनी रहे, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं। दिल्लीके प्रजाजनोंकी दृष्टिमें—यही नहीं, किन्तु हिन्दुस्थानके समस्त लोगोंकी दृष्टिमें—दिल्लीपति सर्वश्रेष्ठ, दूसरा परमेश्वर, माना जाता था। इसलिए अवश्यही उनके अन्तःकरणमें उसके प्रति पूज्यभाव और अभिमान होगा। परन्तु आगे चलकर जैसे जैसे कम्पनी सरकारकी प्रबलता अधिक होती गई, और वास्तविक सार्वभौमिकता उसके हाथमें आती गई, वैसे वैसे इस नामधारी कठपुतलेको चक्रवर्त्ती राजा मानकर उसके पादपद्मोंमें लीन होनेका विचार कम्पनी सरकारके अधिकारियोंको अप्रयोजक मालूम होने लगा। दिल्लीका पहला रेजीडेन्ट सर चार्ल्स मेटकॉफ बड़ा राजनीति-कुशल था। वह बादशाहके आदर-सत्कारमें कुछ भी कमी न पड़ने देता था। परन्तु लार्ड एमहर्स्ट इत्यादि अभिमानी पुरुष बादशाहको इतना सम्मान देना पसन्द नहीं करते थे। उन्होंने अपनेको बादशाहकी बराबरीका समझ कर दरबारमें जूते निकाल कर जाना, तथा बादशाहके चरणोंके निकट बैठना, आदि बातोंको स्वीकार नहीं किया। प्रत्युत, उन्होंने बादशाहके निकट दरबारी मंच पर बैठनेका अपना स्वत्व प्रस्थापित किया। आगे चलकर लार्ड बेंटिकने नजरानोंके बारेमें काटकसर की। इसके बाद लार्ड एलिनबरोने इसके भी आगे एक कदम और बढ़ाया। उन्होंने स्वयं एक छत्रपति राजाके समान बादशाहसे भेट की; और बादशाहको वार्षिक नजराना देनेकी जो प्रथा थी, उसे बन्द कर दिया; इस कारण बादशाहको विषमता मालूम हुई; और उसका मन उदास हो गया। लार्ड एलिनबरोके बाद लार्ड डलहौसी हिन्दुस्थानके गवर्नर-जनरल हुए। उन्होंने दिल्लीके

बादशाहके व्यर्थ आडम्बरको सदाके लिए तोड़ डालनेका प्रयत्न किया। बादशाहका औरस पुत्र शाहजादा सन् १८२९ ईसवीमें मर गया। उस समय लार्ड साहबने मृत शाहजादेके पुत्रसे सिंहासन-त्यागका पत्र पहले ही से लिखा लिया; जिससे बहादुरशाह बादशाहके बाद दिल्लीके तख्त पर उसे बैठानेका मौकाही न आवे। इन समस्त अपमानोंके कारण बादशाहको विशेष कष्ट हुआ; और इस दुःखदायक विचारसे उसका अन्तःकरण क्षुब्ध हो गया कि, उसके बाद मुगल बादशाहत बिलकुल रसातलको चली जायगी। उसी दशामें सन् १८५७ का साल आया; जिसने बाहादुरशाह जैसे हताश और सन्तप्त राजवंशीय लोगोंको बलवा मचानेका अवसर प्राप्त करा दिया। उसका भयंकर परिणाम दिल्लीके इतिहासमें लिखा है।

सन् १८५७ ईसवीमें दिल्लीमें जो भयंकर बलवा मचा, उसमें बहादुरशाह शामिल हो गया। इस बलवेसे उसे लाभ तो कुछ न हुआ, परन्तु उसके पुत्र मेजर हडसनकी बन्दूकों द्वारा मारे गये; और स्वयं वह भी अँग्रेजों द्वारा पकड़ लिया गया। अँग्रेजोंने फौजी अदालतके सामने उसकी तहकीकात की; और उसे सदाके लिए काले पानीको भेज दिया। फल यह हुआ कि, दिल्लीमें रहते हुए उसे जो कुछ थोड़ा-बहुत वैभव प्राप्त था, वह भी अब बिलकुल जाता रहा; और रंगूनमें सन् १८६२ ईसवीके अक्टूबर महीनेकी सातवीं तारीखको, अत्यन्त विपदावस्थामें, दिल्लीका यह आन्तिम बादशाह काल-कवलित हुआ! इस प्रकार मुगल बादशाहतका समूल नाश हो गया; और वह कालके विश्व-भक्षक जबड़ेमें फँस गई! दिल्लीके सार्वभौमिक पदका भोग करनेवाले अनेकों अच्छे और बुरे राजाओंके केवल नाम तथा उनके सुकर्म और कुकर्म मात्र दिल्लीके इतिहासमें दर्ज हैं; और दिल्ली नगरी आजकल उन राजाओंके भव्य महलों, उनके विशाल मीनारों, उनके अत्युच्च जयस्तम्भों और उनकी भारी मसजिदोंका

प्रदर्शन करती हुई, दर्शकोंके अन्तःकरणमें आश्चर्य और खेद उत्पन्न करा रही है। मार्क्स आन्टोनियसने क्या ही ठीक कहा हैः—

"O! Mighty Sovereigns! do ye lie so low?
Are all thy conquests, glories, triumphs, spoils
Shrunk to this little measure? Fiar thee well!"

अर्थात् हे श्रेष्ठ राजाओ! आज तुम किस गिरी हुई दशामें वर्तमान हो! क्या तुम्हारे विजय, प्रभुत्व, शान-शौकत और लूटमारका यही अन्त है? तुम्हें अन्तिम नमस्कार है!

राजर्षि भर्तृहरिने भी ऐसी ही उक्ति की है। वे कहते हैं:—

सा रम्या नगरी महान् स नृपतिः सामन्तचक्रं च तत् ।
पार्श्वे तस्य च सा विदग्धपरिषत्ताश्चन्द्राबिम्बानना: ॥
उन्मत्तः स च राजपुत्रनिवहस्ते बन्दिनस्ताः कथाः ।
सर्वं यस्य वशादगात् स्मृतिपथं कालाय तस्मै नमः ॥

अर्थात् वह रमणीय नगरी, वह बड़ा राजा, राजाका वह मंडल, उसक पार्श्व भागमें रहनेवाली वह विद्वानोंकी सभा, वे चन्द्रमुखी सुन्दर स्त्रियाँ, वह बलशाली राजपुत्रोंका समुदाय, तथा वे स्तुति करनेवाले भाट और वे अनेक प्रकारकी अच्छी बातें आदि सब जिसकी सामर्थ्यसे लुप्त होकर स्मृतिशेष मात्र रह गयी हैं, उस कालको नमस्कार है!

दूसरा प्रकरण ।
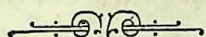
दिल्लीका किला और मुख्य राजप्रासाद ।
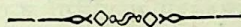
दीवान-ए-आम और दीवान-ए-खास ।

जो लोग दिल्ली देखने जाते हैं, उन्हें वहाँके मुख्य मुख्य स्थानोंको देखनेके लिए कमसे कम तीन दिन तो अवश्य ही लग जाते हैं। इन तीन दिनोंमें एक दिन दिल्लीका प्रसिद्ध किला तथा उसके मुख्य राज-महल और उसके निकटवर्ती अन्य इतिहास-प्रसिद्ध स्थानोंको देखने एवं फीरोजाबाद और इन्द्रप्रस्थके दर्शन करनेमें व्यतीत होता है। कोई भी नया मनुष्य जो दिल्ली जाता है, वहाँके राजमहल ही पहले उसके चित्त-को मोहित कर लेते हैं। उनकी सुन्दरता, उनकी भव्यता, उनका तेज, उनकी नक्काशी और उनकी रचना कुछ ऐसी मनोरम है कि, उनकी ओर देख कर, शायद ही कोई मनुष्य हो, जिसका अन्तःकरण आनन्द और आश्चर्यसे न फूल उठे। इन राजमहलोंका वर्णन करनेके पहले उनका थोड़ासा इतिहास दे देना आवश्यक है।

दिल्लीका किला तथा उसके राजमहल शाहजहाँ बादशाहने बनवाये हैं। एक ऐतिहासिक ग्रन्थसे मालूम होता है कि, उनके बननेमें बीस साल लगे; और उस समयके हिसाबसे पन्द्रह लाख रुपये खर्च हुए। इस किलेका घेरा एक मील है; और उसमें पहले दस-बारह राजमहल थे। परन्तु इस समय उनमेंसे सिर्फ मुख्य मुख्य महल ही कायम हैं; और शेष नष्ट हो गये हैं। इस किलेमें शहरकी ओरसे दो द्वार हैं। उनमेंसे एक द्वार पर जयमल और फतहसिंह नामक विजयी राजपूत वीरोंकी, दो मूर्तियाँ थीं, जो हाथीपर सवार थीं। ये मूर्तियाँ भारतके शिल्पकारोंने

बनाई थीं। इनके विषयमें यह आख्यायिका प्रसिद्ध है कि, ये दोनों वीर चित्तोड़में अकबरसे बड़ी शूरताके साथ लड़े; और अपनी मातृभूमिके लिए धारातीर्थमें पतन हुए; इस लिए अकबरने उनके स्मरणार्थ इन मूर्तियोंको बनवाया; और उन्हें अपने राज-द्वार पर खड़ा किया। कोई कहते हैं कि, जहाँगीर बादशाहने ये मूर्तियाँ बनवाई थीं। खैर, किसी भी बादशाहने उन्हें क्यों न बनवाया हो, परन्तु बर्नियर नामक यात्रीने प्रत्यक्ष देखा था कि, वे शाहजहाँके राज-द्वार पर खड़ी थीं। उसने अपनी भारतीय यात्राके वर्णनमें उन मूर्तियोंकी सुन्दरताकी बड़ी प्रशंसा की है; और कहा है कि, हिन्दुस्थानमें मनुष्योंकी पहली मूर्तियाँ यही हैं। उसने अपनी यात्रामें लिखा है कि, "जयमल और फत्ताकी मूर्तियाँ कला-कौशलकी दृष्टिसे बड़ी मूल्यवान् हैं। वे लाल रेतीले पत्थरकी बनी थीं; और उनका आकार मनुष्यके आकारके बराबर था। जिन बड़े बड़े हाथियोंपर ये मूर्तियाँ रखी थीं, वे काले संगमरमरके बने थे। और हौदे सफेद और पीले संगमरमरोंसे अलंकृत किये गए थे।" *अस्तु!

किलेका दूसरा दरवाजा 'लाहोर दरवाजे' के नामसे प्रसिद्ध है; और वहाँकी खाईका काम अत्यन्त ही दर्शनीय है। स्वयं दरवाजा ही बड़ा मजबूत तथा अभेद्य है, और उसके ऊपरसे अत्यन्त ही रमणीय दृश्य दिखाई देता है। उसके पश्चिममें जुम्मा मसजिद

* "The statues of Jaymal and Patta are simply valuable as works of art, as they are, perhaps, the only portrait statues that have been erected in India for many centuries. They are made of red sand-stone, and are of life-size, while the huge elephants on which they sit are of black marble, and the hinsings are decorated with white and yellow marbles."—*Bernier's Travels.*

और पूर्वमें शहर तथा मन्दिर देख पड़ते हैं। इस लाहोर दरवाजेसे चाँदनी चौक तक बिलकुल सीधा रास्ता जाता है। इस दरवाजेसे किलेमें प्रवेश करते ही प्रथम नक्कारखाने अथवा नौबतखानेकी इमारत द्दष्टिगोचर होती है। इसके बाद 'दीवान-ए-आम' और 'दीवान-ए-खास' नामके दो मुख्य राजमहल देख पड़ते हैं। ये ही दिल्लीपतियोंके लोकोत्तर प्रासाद हैं।

दिल्लीमें जो अनेक प्रेक्षणीय स्थल हैं, उनमें 'दीवान-ए-आम' और 'दीवान-ए-खास' नामके ये दो बादशाही दरबार मुख्य हैं। ये प्रासाद दिल्लीके किलेके भीतर हैं। शाहजहाँ बादशाहने यह किला बनवाया था। यह अत्यन्त भव्य और प्रचंड है। यह आगरेके किलेकी नांई सुन्दर है; और सारा किला लाल पत्थरका बना है। यह किला जमना नदीके तीर पर स्थित है; और इसका घेरा डेढ़ मील है। इसके आस-पास एक बृहत् कोट है, जो लगभग चालीस फीट ऊँचा है। इस किलेके मुख्यद्वारको 'लाहोरगेट' कहते थे, परन्तु अब वह उसका नाम नष्ट होकर 'विक्टोरियागेट' हो गया है। उस द्वारके शिरोभाग पर नील-रक्त-शुभ्र–वर्णत्रयमिश्रित–एक छोटीसी ध्वजा फहराती रहती है। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि, यह ध्वजा हमारी उस दयालु सरकारकी है, जिसकी बान है कि, हम सब वर्णोंकी प्रजाके साथ समान बर्ताव करते हैं। इस प्रवेश-द्वारके भीतर जाते ही पहले अनेक बड़ी बड़ी मेहराबें मिलती हैं; और वहाँसे किलेका सारा वैभवशून्य दृश्य दिखाई पड़ने लगता है। सन् १८५७ के सिपाहीविद्रोहके समय यहाँकी अनेकों सुन्दर इमारतोंके ध्वंस हो जानेके कारण सारा किला उजाड़ हो गया है। तथापि उसकी दीनावस्थाको छिपाकर उसे हराभरा दिखलानेके लिए ही मानो वहाँकी जमीन साफ करके, रास्ते आदि व्यवस्थित करके, थोड़ेसे वृक्ष लगा दिये हैं; और कई एक

स्थानोंपर छोटे छोटे बगीचे लगा दिये हैं। राजमहलका सिर्फ दर्शनीय भाग ही सुरक्षित रक्खा है; और शेष कई महलोंका नाश कर दिया गया है। सिर्फ वे ही राजमहल कायम रखे गये हैं जिन्हें स्वाभाविक रीतिसे फौजी अधिकारी काममें ला सके। उनका मिश्र स्वरूप अवलोकन करके दर्शकोंको खेद उत्पन्न हुए बिना नहीं रह सकता! जिन राजमहलोंमें संगमरमरके पत्थरोंका शुभ्र तेज चमकता था, वहाँ सरकारके पब्लिक वर्क्स विभागने अँग्रेजी तरहकी जो मरमम्मतकी है, वह अत्यन्त ही विसंगत मालूम होती है! जिन राजमहलोंके प्रवेश-द्वारों में अनेकों द्वारपाल सशस्त्र डँटे रहते थे, उनके सामने आज वृक्षोंके गमलोंके सिवा और कुछ नहीं दीख पड़ता! अस्तु। इस प्रकार समस्त किलेका तेजहीन दृश्य देखकर काल-चक्रकी कुटिल गतिका बारम्बार स्मरण होने लगता है कि, इतनेमें हमारे सामने नेत्राकर्षक, लाल रंगकी, खुली हुई, परन्तु अत्यन्त भव्य, इमारत उपस्थित होती है। यही है इतिहास-प्रसिद्ध 'दीवाने आम' नामका दिल्लीपतिका मुख्य दरबार!

यह सुप्रसिद्ध दीवानखाना सुनहले रंगके बेल-बूटोंसे सुशोभित किया हुआ पहले अपार वैभवका वासस्थान था। इस दीवान-ए-आमकी सारी छत चाँदी की बनी थी; और उसपर कलाकौशलका बहुत बढ़िया काम किया हुआ था। यहाँके प्रत्येक स्तम्भपर आसमानी रंगका चमकदार मुलम्मा चढ़ा हुआ था; और उसमें ठौर ठौर पर सुन्दर पुष्प खुदे हुए थे। इस इमारतकी कुल नक्काशी बहुतही अप्रतिम थी—केवल यही नहीं, किन्तु उसमें कई एक इतिहासप्रसिद्ध घटनाओंके चित्र, अत्यन्त मार्मिक रीतिसे, चित्रित किये हुए थे। जिस समय शाहजहाँ बादशाहने आगरेका ताजमहल बनवाया, उस समय उसने शीराजके प्रसिद्ध कारीगर अमानतखां को उसपर अपना नाम लिखने की आज्ञा दी थी; इसलिए उसने ताजमहलमें एक जगह पर "शीराजका नम्र फकीर

अमानतखां" के शब्द चित्रित करके हिजरी सन् १०४८ लिख दिया है। इसी प्रकार, शाहजहाँ बादशाहने एक यूरोपवासी चित्रकलाविशारद को भी यह आज्ञा दे दी थी कि, इस महत्वकी चित्र-मालामें वह अपनी स्पेन की पोशाकमें एक तसबीर खींच ले। इस मनुष्यका नाम 'आस्टिन डी बोर्डो' था। इस कुशल कलमबहादुरने हिन्दुस्तानके सब प्रकारके सुन्दर पक्षियोंकी प्रतिकृतियाँ इस दीवानखानेमें चित्रित की थीं। इसके आतिरिक्त, उसमें एक जगह पर एक अत्यन्त तेजस्वीं तलवारका चित्र भी खींचा था। इस चित्रका इतिहास यह था कि, एक बार चित्तोड़का एक राजपुत्र दरबारमें बैठा था कि, बादशाहके किसी प्यारे मुसलमानने उसका थोड़ासा अपमान कर दिया। उसी समय उस तेजःपूर्ण राजपूत छौनेने अपना खड्ग निकालकर भरे दरबारमें बादशाहके सामने उसका बदला लिया; और जब बादशाहने उससे इसका उत्तर पूँछा, तब उसने 'लेडी आफ दी लेक' काव्यके 'रॉडरिक ढू' की नाईं यह तेजस्विता-पूर्ण उत्तर दिया किः--

"I right my wrongs where they are given
Though it were in the court of Heaven."

अर्थात् मैं अपनी भूलोंको भी सत्य सिद्ध कर सकता हूँ—चाहे न्यायालय स्वर्गका क्यों न हो!

इस उत्तरको सुनकर दरबारके सारे लोग आश्चर्यमें आगये। अस्तु। इस महलकी सौन्दर्य-मर्यादा यहीं पर समाप्त नहीं होगई। इस महलके मध्यमें दस फुट ऊँचा, संगमरमर पत्थरका, एक चबूतरा है, जिसपर एक बहुतही सुन्दर शिखराकार शिरोभाग बना है। वह स्फटिकके सदृश शुभ्र है; और उसमें शिल्पकारके कलाकौशलकी परमावधि ही होगई है। इस सुन्दर स्थलके मध्यमें दिल्लीपतिका तख्त—जगत्प्रसिद्ध

मयूरसिंहासन–रखा जाता था। मुसलमानी इतिहासमें इस सिंहासनको 'तख्ते ताऊस' कहा है।

इस तख्तका वर्णन जितना किया जाय, उतना थोड़ा है। दिल्लीके अनेक बादशाहोंने अनेक सिंहासन निर्माण कराये होंगे, परन्तु ऐसा अद्वितीय सिंहासन किसीने भी नहीं बनवाया। यह सिंहासन दीर्घवृत्ताकार था; और उसकी लम्बाई छै फुट तथा चौड़ाई ४ फुट की थी। इसका सारा ऊपरी भाग हीरा, माणिक, नीलम, पन्ना, पुखराज, इत्यादि अमूल्य रत्नोंका बना हुआ था; और नीचेका भाग सुवर्णका बना था, जिसके दर्शनीय भाग पर हीरे जड़े थे। उसमें जो माणिक जड़े थे, सिर्फ उन्हींकी संख्या १०८ थी। इसके सिवा जगह जगह पर नीलमणि और पुखराजका भी उपयोग किया गया था। उस सिंहासन पर एक सुवर्णवृक्ष बनाकर उस पर एक मोर बैठाया गया था; और ऐसी योजना की गई थी कि, जिससे उसके रत्नजटित डैने अनायास ही सिंहासनासीन बादशाहके ऊपर उड़ते रहें। मोरके डैनोंकी कारीगरी अत्यन्त अप्रतिम थी। उनपर विविध रंगोंको यथोचित रूपसे दर्शानेके लिए नाना प्रकारके रत्न जड़े थे। बादशाहके शिरोभागका छत्र भी हीरे-मोतियों का था; और उसमें बकुलपुष्पके समान, अत्यन्त तेजस्वी, मोतियोंकी झालर लगी थी। इस मयूरासनके समस्त हीरे गोलकुंडाकी खानके थे; और वे तारकापुंजकी नाई चमकते थे। इस मयूरासन पर पीछेके द्वारसे आकर बादशाहकी सवारी बड़ी सज-धजके साथ विराजमान होती थी। इस अद्वितीय मयूर-सिंहासनके कारण दरबारको अप्रतिम शोभा प्राप्त हुई थी। टावर्नियर नामके एक फरासीसी यात्री ने इस सिंहासनका मूल्य लगभग डेढ़ करोड़ रुपयेका अनुमान किया है! अस्तु। दिल्लीपति पर कुटिल कालकी वक्रदृष्टि हुई; और सन १७३९ ईसवीमें ईरानके प्रबल बादशाह नादिरशाहने इस मयूरासनको हस्तगत किया! तथापि

यह दीवान-ए-आम दरबार, उसके बाद भी, बहुत दिनों तक कायम था। परन्तु सन् १७६० ईसवीमें पुण्यपत्तनस्थ (पूनेके) पेशवा सदाशिवराव भाऊने, पानीपतके युद्धके समय, जोशमें आकर इस पर आक्रमण किया; और सूरजमल जाटके सदुपदेश पर तनिक भी ध्यान न देकर—पहले मुगलोंने जो रायगढ़के नूतनसंस्थापित हिन्दू साम्राज्यके सिंहासनका भंग किया था, उसका बदला चुकानेके उद्देशसे—इस भव्य महलकी सारी चाँदीकी सुन्दर छत तोड़ डाली; और उसके सिक्के बनाकर सैनिकोंको बांट दिये ! एक स्थानपर लिखा है कि, इस छतकी कीमत सत्रह लाख रुपये आई थी । इस वैभवालंकृत महलके वर्तमान दीन स्वरूपका अवलोकन करतेही किसकी आँखोंसे दुःखाश्रु न टपक पड़ेंगे ? आजकल वहाँ वह सुवर्णजटित नक्काशी नहीं रही है; और न वहाँ वह मयूरासन ही कहीं दीख पड़ता है; जिसे देखकर बड़े बड़े पृथ्वीपति भी दिल्लीपतिके वैभवकी ईर्षानलमें जल मरते थे ! जिस संगमरमरके चबूतरे पर यह रत्नासन रखा जाता था, वह निस्सन्देह अभी तक स्थिर है; और अपनी विपदावस्था जतला रहा है ! इस पूज्य स्थलके चारों ओर लोहेकी छड़ें लगा दी गई हैं, कि जिससे नाना प्रकारके, सभी दर्शकोंका उसमें हस्तस्पर्श न हो सके ।

अस्तु । इस दुर्दैव-ग्रस्त ‘ दीवान–ए–आम ’ का दर्शन करके दर्शकोंके अन्तःकरणमें वैभव की क्षणभंगुरताके विषयमें अनन्त कल्पनातरंगें उठने लगती हैं; और उनका मन किंचित् अस्वस्थ हो जाता है, कि इतनेहीमें उन्हें ‘ दीवान–ए–खास ’ नामकी एक दूसरी मनोरम इमारत देख पड़ने लगती है । इस इमारतकी स्फटिकतुल्य शुभ्र प्रभा दर्शकोंके नेत्रोंको ऐसा आकृष्ट कर लेती है कि, उन्हें अपनी पूर्व-अवस्थाका सहसा विस्मरण हो जाता है ! यथार्थमें, इससे यह सहजहींमें मालूम हो जाता है कि, संसार-चक्रमें फँसे हुए मानव प्राणीको मायापाश किस

प्रकार बारम्बार बद्ध करता रहता है । अस्तु । इस विख्यात 'दीवान-ए-खास' नामक भवनमें जानेकेलिए दर्शकोंको प्रथम एक सुन्दर पुष्पबाटिकामें प्रवेश करना पड़ता है । वहाँ जाकर सामने खड़े होनेपर यह भास होता है कि, हमारे सामने कोई अत्यन्त धवल, तेजःपुंज और अपूर्व वस्तु खड़ी है । इस खास महलका सारा काम अत्यन्त शुद्ध और स्वच्छ एवं अति उत्तम संगमरमरके पत्थरका बना है । उसमें भाँति भाँतिके अनेकों रत्न जड़े हैं, और ठौर ठौर पर सुवर्णकी अद्वितीय नक्काशी होनेके कारण, महलको अप्रतिम शोभा प्राप्त होगई है । इस महलके एक ओर जमनानदीका दृश्य दिखाई देता है । एक ओर बागकी शोभा देख पड़ती है । एक ओर इसका प्रवेश-द्वार चमकता है कि, जिसपर सुवर्णांकित न्यायतुलाका चित्र खींचा हुआ है । सायंकालके समय इस महलपर जब कभी कोमल, परन्तु आरक्त, सूर्यकिरणोंकी प्रकाश-लहरें परावर्तन पाकर चमकने लगती हैं, उससमय यहाँ जो तेजोमय दृश्य दृग्गोचर होता है, वह सिर्फ देखते ही बनता है ! सचमुच सोचनेकी बात है कि, जिस समय यहाँ सच्चे रत्न विराजते होंगे, उस समय यहाँ कैसी अप्रतिम शोभा दिख पड़ती होगी । वास्तवमें उसका वर्णन करना अत्यन्त कठिन है ।

इस महलके पूर्वाभिमुख द्वारके शिरोभाग पर फारसी जबानमें यह पद्य लिखा है:—

"अगर फिर्दौस बर-रूए जमीनस्त-
हमीनस्तो हमीनस्तो हमीनस्त ।"

"If on the earth be an Eden of bliss,
It is this, it is this, none but this!"

अर्थात् यदि पृथ्वी पर कहीं स्वर्ग है, तो वह यहीं है, यहीं है, यहीं है ! यहाँ पर हमें पं० श्रीधर पाठककी इस कविताका स्मरण होता है:—

" यही स्वर्ग सुरलोक यही सुरकानन सुन्दर।
यहिँ अमरनको ओक यहीं कहुँ बसत पुरन्दर।"

—काश्मीर-सुखमा।

इस सौन्दर्य-मान्दिरमें अनेकों अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटनाएँ घटित हुई हैं। इससे जान पड़ता है कि, मानों राजकीय परिवर्तनोंका अवलोकन करनेके लिए ही यह महल निर्माण किया गया है। इसी महलमें शाहजहाँ बादशाहने बड़ी सजधजके साथ सिंहासनारूढ़ होकर दिल्लीका शासन किया था। इसी महलमें ईस्ट इंडिया कम्पनीके हेमिल्टन साहबको, बादशाहका स्वास्थ्य ठीक कर देनेके उपलक्ष्यमें सैंतीस ग्राम पारितोषिकमें दिये गये; और कम्पनीके मालपर कर माफ करनेकी आज्ञा दी गई थी। इसी महलमें बैठकर औरंगजेब बादशाहने अपने दोनों भाइयों, दारा और मुरादका शिरच्छेद किया था। इसी महलमें नादिरशाहने दिल्लीपति महमूदशाह तुगलकको अपने वश किया था। इसी महलमें गुलाम कादिरने शाह-आलम बादशाहकी आँखें निकलवा कर उसके बेटेका खून किया था। इसी महलमें महादजी सेंधियाने गुलाम कादिरको कैद करके नेत्रहीन बादशाहके सामने पेश किया था; और अपनी बहादुरीके उपलक्षमें दिल्लीपतिसे कई सनदें हासिल की थीं! यही नहीं, किन्तु **गोरक्षाकी सनद** भी इसी दीवान–ए–खास महलमें प्राप्त हुई थी! बंगाल, बिहार और उड़ीसाके प्रान्तोंकी सनद, यानी सुप्रसिद्ध 'दीवानी' नामका फरमान, इसी महलमें ईस्टइंडिया कम्पनीको दिया गया था! सचमुचही इस महलमें न जाने कितनी महत्त्वपूर्ण और राज्यक्रांतिकी घटनाएँ घटित हुईं! सन् १७७३ ईसवीसे लेकर सन् १८०३ ईसवी तक दिल्लीका बादशाह मराठोंके बिलकुल हाथमें था; यही नहीं, किन्तु उस प्रान्त पर सच्चा अमल भी उन्हींका था। ईस्ट इंडिया कम्पनीको यह बात सहन नहीं हुई। उसने बादशाहको स्वतंत्र करनेका

प्रयत्न किया। उस समय लार्ड लेक साहबको " सुमसन-उद्दौला अश-गार-उलमुल्क खान-दौरान-खान जनरल लेक बहादुर फतेहसिंह " नामका जो खिताब प्राप्त हुआ था, वह भी इसी दीवान–ए–खास महल में प्रदान किया गया था! हा! हा! कैसे खेदकी बात है कि, जिस जगह अनेक बादशाहोंका राज्याभिषेक हो, उसी जगह उनका पद-च्युत होना भी बदा हो! जिस राज-महलमें दिल्ली-पतियोंके वैभवको अत्युच्च स्थान प्राप्त हुआ, क्या वहीं उनके राज-वैभवका अन्त भी हो! प्यारे पाठको! तनिक सोचिए तो सही, कैसी परितापजनक कहानी है! कैसा हृदयविदारक दृश्य है! अंगरेजी सरकारकी स्वाभाविक दयालुता से मिली हुई पेंशनपर गुजारा न होनेके कारण मृत्युकी मार्गप्रतीक्षा करनेवाले बेचारे वृद्ध बहादुरशाह–दिल्लीके अन्तिम बादशाह–पर जो सन् ५७ के बलवेमें शामिल होनेका अभियोग लगाया गया; और उसकी जाँचके लिए कर्नल डावेस, मेजर पामर, मेजर रेडमंड, मेजर सायर्स और कैप्टन रोडनेका जो कमीशन बैठाया गया, सो भी इसी " दीवान-ए-खास " महलमें! जिस सार्वभौम नृपतिको दूसरे लोगोंका न्याय करना चाहिए, दूसरे यदि उसीके सिंहानसन पर बैठकर उसीका न्याय करें, तो बतलाइये इससे अधिक दुर्भाग्यकी बात और कौनसी हो सकती है? हम ऊपर कह चुके हैं कि, इस महलकी एक ओर मुगल बादशाहोंने न्याय-तुलाका एक चित्र बनाया है, सो उसका केवल यही उद्देश्य है कि, यहाँ जो न्याय दिया जायगा वह बावन तोला पाव रत्ती बिलकुल ठीक ही होगा। इसी न्यायकी तुलाके सामने बैठकर हमारी दयालु अँग्रेज सरकारके उपर्युक्त अधिकारियोंने बादशाहको जो न्याय दिया, वह बिलकुल ठीक होना ही चाहिए! बादशाह पर जो अभियोग लगाये गये थे, उनमें एक यह था कि, इसने अपनेको दिल्लीका बादशाह जत-लाते हुए ढौंड़ी पिटवाई। इस, तथा इसी प्रकारके दूसरे अभियोगोंके

कारण, नियमानुसार उसकी जाँच हुई; और उस बेचारेको काले पानीकी सजा दी गई! सन् १८५८ ईसवीके मई महीनेकी ग्यारहवीं तारीखको, लन्दनके सेन्ट जेम्स हॉलमें, आइल्सबरीके एक पार्लमेंटके सभासदने, इस बादशाहकी उस समयकी दशाका, अपनी आंखोंसे देखा वर्णन किया है। वह कहता है:–

"I saw that broken down old man, not in a room, but in a miserable hole of his palace, lying on a bedstead with nothing to cover him, but a miserable tattered coverlet. As I beheld him, some remembrance of his former greatness seemed to arise in his mind. He rose with difficulty from his couch, showed me his arms, which were eaten into by disease and by flies, and partly from want of water; and he said in a lamentable voice that he had nothing to eat! I will not give any opinion as to whether the manner in which we are treating him is worthy of a great nation, but is this a way in which, as christians, we ought to treat a king?"

अर्थात् "मैं उस जर्जर और अशक्त वृद्ध बादशाहसे मिला था। वह अपने राजमहलमें नहीं, बल्कि एक रद्दी कोठरीमें, एक बिस्तर पर पड़ा था। उसके पास ओढ़नेके लिए एक फटी-पुरानी गुदड़ीके सिवा और कुछ भी नहीं था। ज्यों ही मैंने उसकी ओर देखा, त्यों ही मुझे ऐसा जान पड़ा कि, उसे अपने प्राचीन वैभवका स्मरण हो आया है। वह बड़े प्रयत्नसे अपनी जगहसे उठा; और उसने मुझे अपने हाथ दिखलाये। वे व्याधिसे ग्रस्त हो रहे थे; और मक्खियोंने उन्हें खा डाला था! इसका एक कारण यह था कि, उसे पानी न मिलता था! बड़े करुणस्वरसे उसने कहा कि, मुझे खानेके लिए कुछ भी नहीं

मिलता ! ! इस रीतिसे जो हम लोग (अंग्रेज) उसके साथ बर्ताव करते हैं, वह रीति हमारे बृहद् राष्ट्रके लिए उचित है अथवा नहीं—इस पर मैं अपनी राय प्रकट नहीं करूँगा। हां, एक ईसाईकी हैसियतसे मैं यह पूछता हूँ कि, क्या किसी भी राजाके साथ ऐसा बर्ताव करना उचित है ? ”

अस्तु; इस प्रकार, इस बादशाहकी दीन दशाके बारेमें, बहुत कुछ चर्चा होती रही; और अन्तमें वह रंगून भेज दिया गया ! सचमुच ही इस दीवान-ए-खासकी अन्य महत्त्वपूर्ण विशेष बातें कौन कौनसी बतलाई जाँय ? इस स्थानको देखकर किसके हृदयमें शोक की लहरें न उठने लगेंगी ?

“ दीवान-ए-खास ” के एक ओर जो एक सुवर्णांकित न्याय-तुलाका चित्र बना है, उसका इतिहास भी बड़ा मनोरंजक है। शाह-जहां बादशाह इस महलमें बैठकर जब कि न्याय किया करता था, तब यह दिखलानेके लिए कि, वह न्याय सदैव मानो तराजूमें तुला हुआ होगा, उसने यह न्यायकी तराजू तैयार की। इस न्यायतुलाके निकट एक घंटा था। इस घंटेको बजाकर प्रजाजन बादशाहके यहां अपनी अपनी अर्जियाँ दिया करते थे। कहते हैं कि, शाहजहाँने यह प्रणाली अपने पितासे ग्रहण की। जहाँगीर बादशाहकी न्याय-प्रणालीसे सम्बन्ध रखनेवाली दो आख्यायिकाएँ प्रसिद्ध हैं। उनसे मुगल बादशाहोंकी मनोरंजक न्याय-प्रणालीका अच्छा पता चलता है। वे आख्यायिकाएँ इस प्रकार हैं:—

अकबर बादशाहके पुत्र जहांगीरको अपने इन्साफका बड़ा अभिमान था। गरीब-गुरवे भी बराबर बादशाह तक पहुँच सकें—इस लिए उसने अपने महलमें एक घंटा बाँध दिया था। उसमें एक रस्सी बाँधकर उस रस्सीका अन्तिम सिरा किलेके बाहर एक खंभेमें बाँध दिया था। जब किसी मनुष्यको खास बादशाहकी सेवामें अपनी अर्जी पेश करनी होती,

तब वह उस रस्सीको खींच देता, जिससे महलमें घंटा बज जाया करता था। ज्योंही घँटा बजता, त्योंही बादशाह घंटा बजानेवालेको बुलाता; और उसे उचित न्याय प्रदान करता था। एक बार एक बैल, जिसकी पीठपर पानीसे भरा मशक लदा था, इस रस्सी बँधे हुए खंभेके पाससे जा रहा था। न जाने उसके मनमें क्या लहर आई कि, उसने अपनी गर्दन खँभेपर रगड़ दी। फल यह हुआ कि, महलमें घंटा बज गया। जांच करनेपर मालूम हुआ कि, घंटेका बजानेवाला एक बैल है। तब दरबारके लोगोंने हाथ जोड़ कर बादशाहसे निवेदन किया कि, " खुदावन्द, यह एक गूँगा जानवर है। गर्दन रगड़ दी। कृपा करके छोड़ दीजिएगा "। बादशाहने कहा, " नहीं, इस बैलपर कुछ न कुछ अत्याचार अवश्य हुआ है, इसकी पीठपर पानीसे भरा हुआ जो मशक लदा है उसको तौलना चाहिए। उसको तौलने पर मालूम हुआ कि, मशकमें पांच मन पानी भरा है! इस पर बादशाहने यह आज्ञा दी कि, यह पानी बहुत जियादा है; साढ़े तीन मनसे अधिक पानी मशकमें न भरा जाय। जो कोई भरेगा उसे सजा मिलेगी। "

अब दूसरी आख्यायिका सुनिए। जहाँगीर बादशाह नूरजहाँपर अपने प्राणोंसे भी अधिक प्यार करता था। वह बड़ी बुद्धिमती, शूर-वीर और राजकाजमें भी चतुर थी। शिकार खेलनेका उसे बड़ा शौक था। जब उसे अपने कामोंसे छुट्टी मिलती, तब सुबह और शाम दोनों पहर वह निशानेबाजीका अभ्यास किया करती थी। दिल्लीका किला जमना नदीके किनारे बना है। उसमें जनानखाना और उसका महल दोनों जमना की ही ओर थे। एक दिन नदीके उस पार चांद लगाकर बेगम साहबा निशाना मार रही थीं। दुर्भाग्यवश उनकी एक गोली चूककर एक धोबीके लग गई; और वह बेचारा अपनी जानसे हाथ धो बैठा। धोबिन रोती-चिल्लाती किलेके दरवाजेके पास आई; और

उसने रस्सी खींचकर घंटा बजाया। थोड़ीही देरके बाद पहरेवालोंने उसको बादशाहके सामने लाकर खड़ा किया। वहाँ पहुँचतेही धोबिनने हाथ जोड़कर निवेदन किया, "महाराज, आपके जनानखानेसे एक गोली आई; और वह मेरे पतिके बदनमें घुस गई, जिससे वह मर गया है। कृपा कर इसका न्याय कीजिए।" जाँच करने पर मालूम हुआ कि, स्वयं नूरजहांकी गोलीसे ही धोबीके प्राण गये हैं। यह जानकर बादशाहका चेहरा फीका पड़ गया। दरबारके सारे लोग एकटक बादशाहके मुँहकी ओर देखने लगे। उनको दिलमें यह जाननेकी बड़ी भारी इच्छा हुई कि, देखें बादशाह इस धोबिनके साथ क्या न्याय करते हैं। बादशाहने अत्यन्त शान्तिके साथ एक बन्दूक, बारूद, गोली इत्यादि सामान मँगाया; और बंदूकमें गोली-बारूद आदि भरकर उस बंदूकको धोबिनके हाथमें दे दिया; और कहा, "हमारे मुसलमानी न्यायशास्त्रके अनुसार तुझे खूनके बदले खून ही मिलना चाहिए। नूरजहाँने तेरे पतिको मारकर तुझे विधवा कर दिया है; इसलिए तू भी उसके पतिको मारकर उसे विधवा बना दे। तेरे हाथमें भरी हुई बन्दूक मौजूद है; और नूरजहाँका पति स्वयं मैं तेरे सामने उपस्थित हूँ। अतएव बंदूक चलाकर मेरे प्राण हरण कर ले!"

बादशाहके इस भाषणको सुनते ही दरबारके समस्त लोग चकित हो गये। धोबिनने हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि, "महाराज, इस न्यायसे मुझे संतोष है; परंतु मैंने खून माफ कर दिया।" इस पर बादशाहने उस धोबिनको नूरजहाँसे कई गांव इनाममें दिलवाये; वे गाँव अभी तक उस धोबिनके वंशमें बने हैं।

इस घंटेको बजाकर न्याय-याचना करनेकी प्रणाली उस न्यायतुलावाले मन्दिरमें बराबर जारी थी। वहाँ बैठकर शाहजहाँ बादशाहने

समय समय पर जो न्याय किये थे उनकी भी अनेक आख्यायिकाएं प्रसिद्ध हैं, जिनमेंसे यहां पर एक नमूनेके तौर पर दी जाती है।

एक बार एक मनुष्यने बादशाहकी सेवामें यह अर्जी पेश की कि, "मेरे पिताकी दो लाखकी सम्पत्ति मेरी माताके पास है; और वह मुझे दुराचारी समझ कर उसका कुछ भी हिस्सा नहीं देती। कृपा कर मुझे कुछ दिलवाइए।" बादशाहने उस मनुष्यकी माताको बुलवा भेजा; और उसे अपने पुत्रको पचास हजार रुपये देने तथा सरकारी कोषमें एक हजार रुपये दाखिल करनेकी आज्ञा दी। इस पर उस स्त्रीने निवेदन किया कि, "हुजूर, आपके दर्बारमें न्यायकी तराज़ू है। इस लिए यहां जो न्याय मिलता है उसके ठीक होनेमें तिलमात्र भी सन्देह नहीं हो सकता। आप महाराजाधिराज हैं, आपने मुझे अपने पुत्रको पचास हजार रुपये देनेका जो हुक्म दिया है, सो ठीक ही है; क्योंकि वह मेरे पतिका औरस पुत्र है। परंतु हुजूरने मुझे सरकारी कोषमें एक हजार रुपये जमा करनेकी जो आज्ञा प्रदान की है, उसके लिए मेरा सिर्फ यही निवेदन है कि, मुझे कृपापूर्वक यह बतला दिया जावे कि, सरकारसे मेरे पतिका कौनसा नाता है!" उस स्त्रीका यह मार्मिक भाषण सुनकर बादशाहने उसके वे हजार रुपये माफ कर दिये।

इस आख्यायिकासे इस न्याय-तुलाका उद्देश्य और वहाँके कार्य्यका आदर्श समझमें आ सकता है। अब भी इस न्यायतुलाका सुवर्णांकित चित्र देखनेसे उपर्युक्त आख्यायिकाओंका स्मरण हो आता है।

रंगमहल अथवा मोतीमहल।

यह महल 'दीवान-ए-खास' के नजदीक है। यहाँ पहले शाही जनानखाना था। दिल्लीपतिकी पटरानियां जहां निवास करती थीं, वह स्थान यदि अत्यन्त सुन्दर हो, तो इसमें कोई आश्चर्य्य नहीं। इस महलमें बेल-बूटोंकी सुन्दर नक्काशी की हुई है। आगरेके ताजमहल

की तरह यहाँ भी विविध रंगोंके पत्थर संगमरमरके पत्थरमें जड़े हुए हैं। इससे महलको अद्वितीय शोभा प्राप्त हो गई है। कहते हैं कि, पहले यहाँका सारा काम रत्नजटित था। उस समय इस महलकी सुन्दरता अपूर्व होगी, इसमें सन्देह नहीं। उस समय, समस्त महलमें ठौर ठौर जड़े हुए विविध रंगोंके बहुमूल्य रत्न, अपनी उज्ज्वल प्रभासे, वहाँके मूर्तिमान् सुरुचिर स्त्रीरत्नोंके दिव्य तेजको लज्जित करनेका प्रयत्न अवश्य करते थे; इस कार्य्यमें वे कभी भी सफल-मनोरथ नहीं हुए; प्रत्युत उन्हींको स्त्रीरत्नोंके अनुपम लावण्यसे हार खाकर बिलकुल स्तब्ध और निश्चल होना पड़ता था! इस तेजोमय रंगमहलके आसपास अनेकों आल्हाददायक, सहस्र धारावाले फुहारे, सुन्दर पुष्पवाटिकाएँ, रमणीय लताकुंज, और शीतल-मन्द-सुगन्धित वायुके सेवनार्थ विश्रान्ति-स्थान, इत्यादि बड़े ही रमणीय बने थे, जो उस स्थलकी सुन्दरता बढ़ाते हुए हृदयको अत्यन्त ही आह्लादित करते थे। आजकल तो इनमेंसे कुछ भी वहाँ नहीं रहा है, सिर्फ यह 'रंगमहल' मात्र खड़ा है। रसिक पाठकोंको यहां पर यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं कि, 'मुमताज-महल,' 'जिन्नतमहल' इत्यादि इस महलकी सौन्दर्य्य-लतिकाओंके नामशेष हो जानेके कारण आज यह रंगमहल केवल नामधारी 'महल' रह गया है।

हमामखाने अथवा स्नानगृह।

दीवान-ए-खासके उत्तरकी ओर शाही हमामखाने अथवा स्नानागार बने हैं। इन्हें 'आकाब' कहते हैं। इन स्नानागारोंके तीन कमरे हैं। हरएक कमरेकी धरती पर संगमरमरकी फर्शबन्दी है; जिसके मध्यमें मुख्य स्नानगृह है। इसके आसपासकी नक्काशी अत्यन्त ही सुन्दर है। इस स्नानागारमें पृथ्वीसे पानीकी अनेकों नलियां लाई गई हैं; और उनमें उष्णोदक तथा शीतोदककी उत्तम योजना की गई है। स्नानगृह-

में चारों ओरसे पड़देका प्रबन्ध है। उजेलेके लिए दीवारमें ऊपर काँच-की खिड़कियाँ बनी हैं। ये काँच धुँधले हैं; और उनमेंसे सिर्फ़ प्रकाश आता है, परन्तु भीतरका स्नानविलास बाहरसे किसीको नहीं दिख पड़ता। इस रम्य स्थान पर जाते ही दिल्लीपतिके विलासोंकी अस्पष्ट कल्पना नेत्रोंके सामने खड़ी हो जाती है; और उन विलासोंका प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त करनेकी लालसा उत्साही अन्तःकरणमें उत्पन्न होती है। दीवान-ए-आमके मयूरासनका वर्णन सुनकर, अथवा उसके स्थानको देखकर, कभी किसीको भी, अरबी कथाओंके अबू हुसेनकी तरह, एक दिनके लिए भी, बादशाह बननेकी इच्छा उत्पन्न नहीं होती; अथवा मोतीमहल या रंगमहलको देखकर भी, सौन्दर्य-लतिकाओंके साथ नाना प्रकारकी क्रीड़ा करनेवाले दिल्लीपतिके वैभवसे ईर्षा नहीं होती; परन्तु इन सुन्दर और मनोवेधक स्नानगृहों तथा उनकी उत्तम रचना और योजनाको देखकर शायद ही कोई रंगीला दर्शक ऐसा हो जिसके मनमें मुगल बादशाहोंके विलासोंका अनुभव प्राप्त करनेकी इच्छा न होती हो। वहाँके स्वच्छ और दुग्ध-धवल संगमरमरका सौन्दर्य और प्रशस्त तथा प्रगमनशील स्नानागार-रचना शायद ही और कहीं देखनेको मिलेगी ! सच है, अपूर्व अपूर्व ही है !!

शाहबाग और शाहबुर्ज।

इन राजमहलोंमें शाहबाग और शाहबुर्ज नामक दो स्थान अत्यन्त ही दर्शनीय थे। इनमेंसे शाहबागके नष्ट-भ्रष्ट हो जानेके कारण उसका पूर्व-रूप अब नहीं रहा है। परन्तु शाहबुर्ज अभी तक कायम है। बर्नियर नामके फरासीसी यात्रीने इस बागको स्वयं देखा था। इस बागके नाना प्रकारके संगमरमरके फौवारों और भाँति भाँतिके संगमरमरी जलाशयोंकी अप्रतिम शोभाको देखकर वह विदेशी यात्री आश्चर्य्यसे चकित हो गया था। इस बागमें शाहबुर्ज नामक एक अठपहलू मण्डप

था। उससे कालिन्दी नदीके रमणीय तटका सुन्दर दृश्य दिखाई पड़ता था। इस स्थलपर स्वयं बादशाह विराजमान होते थे, इसलिए उसके बाहरी और भीतरी दोनों हिस्से सुवर्णके बने थे। सुन्दर तसबीरों और बड़े बड़े दर्पणोंसे वह सजाया गया था। सन् १७९३ ईसवीमें फ्रांकलिन साहबने इस स्थलका दर्शन किया था; जिन्होंने इस तरह उसका वर्णन किया है:—

"शाहबाग नामक नृपोद्यानमें एक अठपहलू बँगला है। उसके ऊपरसे जमनाका दृश्य दिखाई देता है। इस मन्दिरका नाम शाहबुर्ज अथवा बादशाही महल है। इसका भीतरी भाग संगमरमरका बना हुआ है। सन् १७८४ ईसवीमें राजपुत्र जवानबख्त इसी महलकी खिड़कीसे कूद कर लखनऊको भाग गया था। इस मन्दिर पर मराठोंके आक्रमण हुए थे, अतएव वह बहुत नष्ट हो गया है।" इसके इकतीस साल बाद हीबर नामके एक यात्रीने इसी स्थलको देख कर इस प्रकार लिखा है:— "मैंने यहाँका बाग देखा, वह बहुत बड़ा नहीं था। परन्तु किसी समय यह अत्यन्त सुन्दर और रमणीय रहा होगा। यहाँ पर सन्तरेकें पुराने वृक्ष दिखाई पड़ते थे। गुलाबके गमले और अन्य पुष्प-लतिकाएँ भी यहाँ कई थीं। स्वच्छ संगमरमरकी नालियां बना कर उनके द्वारा सब ओर पानी ले जाते थे। बागमें एक अष्टकोणाकृति सुन्दर मण्डप अथवा उद्यानगृह था। वह बहुत ऊँचा था, और उसकी खिड़िकियोंसे नगर तथा सरिताका उत्कृष्ट दृश्य दृष्टिगोचर होता था। परन्तु जिस समय हम वहाँ गये थे, उस समय वह सब अस्वच्छ और अव्यवस्थित दशामें था। स्नान-गृह और फौवारे जलरहित अर्थात् बिलकुल शुष्क हो गये थे। उद्यान-मन्दिरकी फर्शबन्दी पर कूड़ा-कचरा जमा हो जानेके कारण वहाँकी नक्काशी लुप्त हो गई थी; और आसपासकी दीवारोंमें पक्षियोंने अपने घोंसले बना लिये थे!" अस्तु। अब तो यह बाग बिलकुल ही नष्ट हो गया

है। हां, सिर्फ यह 'शाहबुर्ज' नामका स्थल बुरी दशामें मौजूद है। जिस स्थान पर स्वयं दिल्लीपति वायुसेवनके लिए विराजमान होते थे, वहाँ पर अब चमगीदड़ोंका निवास देख कर अवश्य ही उस स्थानको अपने दुर्भाग्य पर खेद होता होगा!

मोती मसजिद।

यह इमारत स्वयं बादशाहकी ईश्वर-प्रार्थनाके लिए थी। इसको सन् १६३५ ईसवीमें औरंगजेब बादशाहने बनवाया था; और इसके बनवानेमें १६,००,००० रुपये खर्च हुए थे। यह इमारत है तो छोटी; पर अत्यन्त सुन्दर है। मुख्य इमारत तीन कमानियोंकी बनी है; इन कमानियों और दीवारों पर जो नक्काशी की हुई है, वह बहुत सादी होने पर भी अत्यन्त मनोरम है। इसको देखकर बड़े बड़े शिल्प-कला-विशारद आनन्दसे डोलने लगते हैं। उनका कथन है कि, यह मसजिद शिल्प-कलाका एक अद्वितीय रत्न है। इस मसजिदका द्वार पाँच धातुओंके मेलसे बना है; और उसपर अत्यन्त ही कमनीय नक्काशी की हुई है। सन् ५७ के सिपाही-विद्रोहके समय इस मसजिद पर गोलोंकी वर्षा हुई थी, जिससे इसे बहुत बड़ा धक्का पहुँचा है। बहुत दिनों तक किसी ने इसकी ओर ध्यान नहीं दिया था, इस लिए इसकी दीवारों पर पीपलके कोमल पत्ते दिखाई देने लगे थे। परन्तु अब उसका रूप पलट गया है; और वह फिर पहले जैसी नई दिखने लगी है। इस मसजिदको बनवानेके बाद स्वयं औरंगजेब बादशाहने ही इसकी प्राणप्रतिष्ठा की; और उसमें निमाज पढ़ना आरम्भ किया। जब वह इस राजप्रासादमें रहता था, तब खास तौर पर, शुभ्र वस्त्र पहिन कर, वह इस मसजिदमें ईश्वर-प्रार्थना किया करता था। इससे जान पड़ता है कि, दारा नामक उसके भाईने जो उसे "निमाजी" नाम दिया था, सो बिलकुल उचित था। अब इस मसजिदकी अच्छी मरम्मत हो गई है।

ऊपर जिन स्थानोंका वर्णन किया गया वही दिल्लीके किलेमें मुख्य स्थान हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ और भी कई राजमहल थे, परन्तु वे सब आज-कल नष्ट-भ्रष्ट हो गये हैं; और उनकी जगह पर अँग्रेजी पल्टनोंके निवास-स्थान बन गये हैं! दिल्लीके किलेका प्राचीन और भव्य स्वरूप, जितना उसके बाहरके लालरंगके कोटसे और बड़ी खाईसे, व्यक्त होता है उतना उसके अन्तःस्वरूपसे नहीं व्यक्त होता; क्योंकि जबसे वहाँ अँगरेजी राज्यकी स्थापना हुई है तबसे उसमें अनेकों नई इमारतें बन गई हैं; और पुरानी गिरा दी गई हैं। इतना होने पर भी हमने जिन मुगल इमारतोंका ऊपर वर्णन किया है, वे अभी तक मुगलोंके वैभवकी गवाही दे रही हैं। अवश्य ही वे दर्शकोंके अन्तःकरणको प्रसन्न किये बिना नहीं रहतीं।

सलीमगढ़ ।

शाहजहाँ बादशाहके महल और जमना नदीके पुलके दरमियानमें सलीमगढ़ नामका एक अत्यन्त प्राचीन किला है। शेरशाहके पुत्र सलीमने इस किलेको बनवाया था, इस लिए इसे सलीमगढ़ नाम प्राप्त हो गया है। जब हुमायूँ बादशाह पुनः दिल्लीको वापिस आया, तब उसे अपने शत्रुके पुत्रका नाम कायम रखना उचित न मालूम हुआ। इसलिए उसने, उस नामको बदल कर, उसका नाम 'नाहरगढ़' रक्खा। यह किला मिट्टीका बना है, और अत्यन्त ही बेडौल है। तो भी इसका बाहरी दृश्य अत्यन्त भव्य है। यह किला जमना नदीके प्रवाहमें बना है, इसलिए वह किसी द्वीपके समान दिखाई देता है। इस किलेसे नदीको सरलतापूर्व्वक पार करनेके लिए जहाँगीर बादशाहने पाँच कमा-नियोंका एक पुल बनवाया था! वह अभी तक कायम है। सलीमगढ़का किला यद्यपि विशेष दर्शनीय स्थान नहीं है, तथापि उसका इतिहास बड़ा महत्त्वपूर्ण है। लन्दनमें जिस तरह 'टॉवर आफ लन्डन' नामका

एक विख्यात किला है, उसी तरह इसे यदि 'टॉवर आफ देहली' कहें, तो कुछ हर्ज नहीं। 'टॉवर आफ लन्डन' नामक किलेमें जिस तरह अनेक राजा और राजनीतिज्ञ लोग कैद थे, उसी तरह देहलीके इस टॉवरमें भी दिल्लीके राजघरानेके बहुतसे राजपुरुष और दिल्लीके दरबारके अनेक सरदार कैदमें रक्खे गये थे। शाहजादा मुराद जब कि शराबके नशेमें चूर था, एक हाथीपर बिठाकर इसी किलेमें लाकर कैद किया गया था। दाराके छोटे लड़के शेखूको, औरंगजेबकी बेटीसे विवाह करके, इसी किलेमें कैद किया था। औरंगजेबके ज्येष्ठ पुत्र मुहम्मद सुलतानको भी पन्द्रह वर्ष तक इसी दुर्गमें पराधीनताका दुख सहन करना पड़ा था। इनके सिवा, अन्य कितने चतुर और महत्त्वाकांक्षी राजनीतिज्ञ यहां आये होंगे, तथा कैदमें पच पच कर मरे होंगे, इसका कुछ पता नहीं। इँग्लैंडके 'टॉवर आफ लन्डन' नामक किलेके कृष्णकृत्योंका वर्णन पढ़कर जिस तरह पाठकोंकी देह पर रोमांच खड़े हो जाते हैं, उसी तरह सलीमगढ़के किलेका वर्णन पढ़कर भी पाठकोंको दुःख हुए बिना नहीं रहता। राज्य-लोभ अथवा अधिकारलोभकी प्रबलताके कारण जो अत्याचार हुए हैं, उनका प्रदर्शन करनेके लिए ही मानो 'सलीमगढ़' अथवा 'टॉवर आफ लन्डन' अथवा 'बैस्टिली' जैसे उग्र एवं भयानक किले अभी तक विद्यमान हैं। अहा! जिस भीमरूपी सलीमगढ़ की किसी समय वह धाक थी, आज वही बिलकुल दीनावस्थामें दिखाई दे रहा है।

तीसरा प्रकरण ।
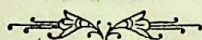
दिल्लीकी जुम्मा मसजिद ।

दिल्लीके राजप्रासादको देखनेके बाद नगरमें प्रवेश करतेही, पहले पहल यह भारी मसजिद दिखाई पड़ती है । हिन्दुस्तानकी बढ़िया इमारतोंमेंसे यह भी एक है । ईसाइयोंके लिए जिस तरह सेंटपीटर्सका गिरजाघर है, अथवा हिन्दुओंका जैसे जगन्नाथजीका मन्दिर है, वैसीही मुसलमानोंकी यह जुम्मा मसजिद है । आगरेका 'ताजमहल' सबसे श्रेष्ठ है । उसके बाद यदि इस मसजिदकी गणना की जाय, तो कुछ अनुचित नहीं । यह सारी इमारत लाल रंगके पत्थरसे बनी है; और बीच बीचमें उसपर संगमरमरकी कारीगरी की गई है, अतएव ऐसी भली मालूम होती है, मानो लाल रंगके दुशाले पर सुन्दर बेल-बूटे कढ़े हों । यह सारी इमारत यदि बढ़िया संगमरमरकी बनी होती, तो आगरेके 'ताज' के समान यह भी अपनी धवल प्रभासे लोगोंको वैसाही मोहित कर सकती थी । अस्तु । यह सारी इमारत यद्यपि संगमरमरकी नहीं बनी है, तो भी इससे यह न समझना चाहिए कि, इसकी बनावट सौन्दर्यमें कुछ न्यून है । यही नहीं, किन्तु समस्त दिल्ली नगरमें सबसे ऊँची इमारत केवल यही एक है; और यह कहना भी अत्युक्ति न होगा कि, यह इमारत अपनी भव्यता और अपनी आरक्त प्रभासे शेष सब इमारतोंको लज्जित कर रही है ।

यह मसजिद एक ऊँची चट्टान पर बनी है; और इसके लिए वह चट्टान तोड़कर साफ की गयी है । इस मसजिदके चारों ओर चार मार्ग हैं । परन्तु इसमें प्रवेश करनेके लिए सिर्फ उत्तर, दक्षिण और पूर्वकी ओरसे

द्वार खुले हुए हैं । पश्चिमकी ओर बिलकुल द्वार नहीं है । वहाँ सिर्फ पत्थरकी एक ऊँची दीवार ही बना दी गई है । जो मुख्य तीन दरवाजे हैं, उनके तीनों ओर नदीके घाटकी सीढ़ियोंके समान सीधी खुली सीढ़ियाँ हैं । मुख्य प्रवेश-द्वार पीतलके ढले हुए हैं; और बहुत भारी तथा मजबूत हैं । इनमें पूर्वीय द्वार बहुत बड़ा और अत्यन्त सुन्दर है । इसे हम महा द्वार कह सकते हैं । इस द्वारसे भीतर जाने पर एक बड़ा भारी आँगन मिलता है। आँगनका विस्तार १४०० घन-गज है । इसमें एक प्रकारके लाल पत्थरकी फर्शबन्दी की हुई है। इस आँगनके बीचोंबीच सुन्दर संगमरमरका एक बड़ा हौज है। उसमें चट्टानके प्राकृतिक झरनेका पानी लाया गया है । इस चौरस आँगनमें ५००० मुसलमान प्रार्थनाके लिए एकत्रित हो सकते हैं। इस इमारतकी मुख्य मसजिद इस मुख्य आँगनके पश्चिममें है । मक्का चूंकि पश्चिममें है, इसलिए, उसकी दिशाका बोध होनेके लिए, ऐसी रचना की गई है । यह मुख्य मसजिद आयताकार है, जिसकी लम्बाई २०१ फीट और चौड़ाई १२० फीट है । उसके शिरोभाग पर सुन्दर संगमर-मरकी तीन मेहराबें हैं, जिन पर सोनेका मुलम्मा चढ़ाकर बहुतही बढ़िया नक्काशी की गई है । इसके दोनों ओर दो मीनारें हैं । वे १३० फीट ऊँची हैं; और उन पर छोटेसे, अत्यन्त कमनीय गुम्बज बने हैं। मसजिदके अग्रभागमें दस दालानें हैं; और उनपर जो ऊँची तथा अर्ध-वृत्ताकार कमानियां हैं, वे अत्यन्त सुन्दर हैं ।

इस इमारतके शीर्षभागपर, बढ़िया संगमरमरपर, काले रंगके पत्थरसे, नस्की भाषाके अक्षर बने हैं । उनमें इस मसजिदके बननेका काल और खर्च लिखा है । उससे यह मालूम होता है कि, इस इमारतके बनानेका काम सन् १६४४ ईसवीसे आरम्भ होकर सन् १६५० ईसवीमें समाप्त हुआ है । इस इमारतके लिए लगभग छे वर्ष तक ५००० लोग काम करते

रहे! उस समयके हिसाबसे इस इमारतके बनानेमें दस लाख रुपया खर्च हुआ था।

इस मसजिदकी सारी फर्शबन्दी संगमरमर की है। उस पर क्रमशः तीन फुट लम्बी और डेढ़ फुट चौड़ी क्यारियां कटी हुई हैं। कुल क्यारियां ९०० हैं। इनमें निमाज पढ़ते समय बादशाह और अमीर-उमराव लोग बैठा करते थे। किबलेके निकट, यानी मध्यभागके अर्धगोलाकृति शिरोभागके नीचे, जो नक्काशी की गई है, वह सर्वोत्कृष्ट है। इसके सामने धर्माध्यक्षका मुख्य पीठ है, जो एक अखण्ड संगमरमरके पत्थरका बना है। यहाँ की एक दीवालपर शाहजहाँ और बहादुरशाहके हस्ताक्षर दिखलाये हैं।

इस मसजिदके एक दालानमें एक कोठरी है। वहाँका जालीका काम अत्यन्त दर्शनीय है। इस कोठरीमें मुसलमान लोगोंकी दृष्टिसे अत्यन्त प्रिय, तथा मुहम्मद साहबके समयकी, पुरानी वस्तुएँ रखी हैं। उनमें सातवीं शताब्दीकी प्राचीन कुरानकी एक हस्तलिखित प्रति है। इसके सिवाय, इमाम हुसेन तथा इमाम हसनके द्वारा लिखी हुई कुरानकी भी दो प्रतियाँ हैं। यहां पर 'कप्प-ए-मुबारक' यानी हजरत मुहम्मदकी चर्मपादुकाएँ भी सुगंधित द्रव्योंमें डालकर रखी गई हैं। 'कदम-उल-मुबारक' यानी उनके पैरकी छाप, और 'मुइ-ए-मुबारक' यानी उनकी दाढ़ीके बाल, भी वहाँ पर रखे हुए हैं। इसी तरह वहाँ पर उनकी कबरके आच्छादनका थोड़ासा शेष भाग भी सुरक्षित रूपसे रखा गया है। जिन महाशयोंको ये चीजें देखनेकी लालसा हो, वे वहाँके काजीको कुछ दक्षिणा देकर उनको अवश्य देख सकते हैं। कहते हैं कि, शाहजहां बादशाहने इन वस्तुओंको लाकर यहाँ बड़ी भक्तिके साथ रखा है।

मुगल बादशाहोंके जमानेमें जुम्मा मसजिदकी बड़ी इज्जत थी। ईदके दिन यहाँ पर बादशाह और उसके अमीर-उमरा बड़े ठाट-बाटके साथ

आया करते थे। उस समय यहाँका दृश्य बहुत ही विचित्र देख पड़ता था। प्रति शुक्रवारको यहाँ पर ईश्वरकी प्रार्थना हुआ करती थी। मुसलमान लोग चूंकि धर्मके लिए पागल होते हैं, इस लिए इस मसजिदमें एकत्रित होने पर, यह मसजिद उनमें चाहे जैसी उत्तेजना उत्पन्न कर देनेका सामर्थ्य रखती थी। सन् ५७ के बलवेके समय, सितम्बर महीनेके एक शुक्रवारको यहाँ 'खुतबा' पढ़ा गया; और दिल्लीके सब मुसलमानोंने उस समय यह घोषणा कर दी कि, 'खल्क खुदाका, मुल्क बादशाहका, अमल बहादुरशाहका'। मतलब यह कि, उस भयंकर प्रसंग में यह मसजिद स्वधर्माभिमान तथा स्वदेशाभिमानकी प्रेरणा करनेवाली एक मुख्य जगह बन गई थी। परन्तु वह प्रेरणा क्षणभंगुर हुई; और राज-द्रोही बलवाइयोंका शीघ्र ही अन्त हो गया। बलवेके बाद यह चर्चा छिड़ी कि, यह मसजिद बिलकुल गिरा दी जावे। परन्तु सरकार-ने मुगल रियासतकी इस बड़ी इमारतको नष्ट करके संसारमें अपनी अपकीर्ति नहीं कराई। यह बहुत अच्छा हुआ। बिशप हीबर नामक यात्रीने जुम्मा मसजिदकी अलौकिक रचना देखकर बहुत ही आनन्द प्रकट किया है—उसने कहा है कि, "इस मसजिदका आकार, उसकी दृढ़ता और उसकी बनावटकी उत्तमताको देखकर मेरे मन पर जैसा प्रभाव हुआ, वैसा हिन्दुस्तानकी दूसरी इमारतोंके देखनेसे नहीं हुआ*।" रसेल नामके एक दूसरे यूरोपीय महाशयने लिखा है कि, "इस इमारतकी विशुद्ध शोभा, उसकी रचनाका परिमाण-सौन्दर्य्य, और भवनसम्बन्धी ऊंची कल्पनाशक्तिकी, यदि हमारे ईसाई प्रार्थना-मन्दिरके क्षुद्र और दरिद्री भवनसे तुलना की जाय, तो दुखसे हमे अपना सिर नीचा

* "The size, the solidity, and rich materials of the Jumma Musjeed impressed me more than anything of the sort which I have seen in India." —*Bishop Heber*.

४

करना पड़ेगा ।" * सारांश यह कि, जिस इमारतके रचना-चातुर्य पर विदेशियोंको भी इतना आश्चर्य्य होता है, वह इमारत, सिर्फ दिल्ली शहरके लिए ही नहीं, किन्तु यदि समस्त भारतवर्षके लिए भी भूषण हो, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं ।

दिल्ली शहर ।

दिल्लीका किला, जुम्मा मसजिद और वर्तमान दिल्ली शहर—ये तीन हिस्से मिलकर नई दिल्ली अथवा शाहजहानाबाद शहर बनता है । इस शहरके चारों ओर एक बड़ा शहरपनाह है, जिसका घेरा साढ़े पांच मील है; और उसके किलेका कोट डेढ़ मील है । किलेमें दो दरवाजे हैं । उनका नाम क्रमशः 'लाहोर गेट' और 'देहली गेट' है । कुल शहरमें दस दरवाजे हैं । उनके नाम इस प्रकार हैं:—

१. 'कलकत्ता गेट'—यह राजमहलके पास है । यहाँसे रेल्वे स्टेशन की ओर रास्ता जाता है ।

२. 'काश्मीर गेट'—यह उत्तरमें है । चर्च और कचहरियाँ इसके नजदीक हैं ।

३. 'मोरीगेट'—यह भी उत्तरमें ही है ।

४. 'काबुल गेट'—यह पश्चिममें है । इसके आगे सदर बाजार लगता है ।

५. 'लाहोर गेट'—यह पश्चिममें है; और यहाँसे चाँदनी चौकको रास्ता जाता है ।

६. 'फर्राशखाना गेट'—यह नैर्ऋत्यमें है ।

---

* There is a chaste richness, and elegance of proportion, and a grandeur of design in all its parts, which are painfull contrast to the *mesquin* and paltry archritecture of our christian churches." —*Russell.*

७. ‘ अजमेर गेट ’—यह भी नैर्ऋत्यमें ही है।

८. ‘ तुर्कमान गेट ’—यह दक्षिणमें है।

९. ‘ देहली गेट ’—यह भी दक्षिणमें ही है।

१०. ‘ राजघाट गेट ’—यह पूर्वमें है। यहाँसे जमनाजीके घाटकी ओर रास्ता जाता है।

किलेसे चलकर दिल्ली शहरमें प्रवेश करनेके लिए लाहोर दरवाजेसे आना पड़ता है। लाहोर दरवाजेके भीतर आतेही एक बड़ा चौड़ा रास्ता मिलता है। यह रास्ता सीधा चाँदनी चौक की ओर जाता है। दिल्ली शहरका नामी चौक यही है। यहाँ धनशाली व्यापारियों और जौहरियों की दूकानें हैं। यहाँका बादशाही जमानेका वैभव अब नष्ट हो गया है; और फिरसे उसके प्राप्त होनेकी बहुत कम सम्भावना है। इस चौककी दूकानें बाहरसे बड़ी भड़कीली दिखती हैं। परन्तु इस रास्ते पर पहले जैसे मूल्यवान् वस्त्र परिधान किये हुए अमीर-उमराव, उनके कीमती सामान और सोने-चाँदीसे अलंकृत अच्छे अच्छे घोड़े, उनके नाना प्रकारसे शृंगारित हाथी, तथा विविध रङ्गके मियानोंके झुंड दिखाई देते थे, उनका अब कहीं पता नहीं है—उनकी जगह पर अब यहाँ अर्वाचीन इक्के और घोड़े-गाड़ियां बहुत हैं। रास्तेसे गुजरते हुए चारों ओर नेचेदार हुक्कोंकी धूम खूब दिखाई देती है। हरएक दूकानमें हुक्का अवश्य होता है। पहले मुसलमानोंको ऐशो-आरामकी जो आदत थी उसका यहाँ मूर्तिमान स्वरूप दिखाई देता है। ये लोग सदैव व्यसनासक्त रहकर विलासितामें मग्न रहते थे। हां, अब अँगरेजी राज्यमें विद्याका प्रचार बहुत कुछ हो चुका है, अतएव इन लोगोंका ऐशोआराम भी अब बहुत कुछ कम हो रहा है; और ये लोग भी अब उन्नतिके मार्गपर अग्रसर हो रहे हैं। यहाँके सुशिक्षित लोग बड़े सभ्य हैं, और बाहरवालोंको वे बड़ी आदरकी दृष्टिसे देखते हैं। तथापि, मुसलमानोंकी रीतिके अनुसार,

औपचारिक बर्ताव और व्यर्थका आदरसत्कार यहाँ पर बहुत है । इसके सिवाय, यहाँ पर व्यर्थ की बड़ाई मारनेवालोंकी भी कमी नहीं है । दिल्लीके चाँदनी चौकमें खड़े होनेपर ‘ दिल्ली इन्स्टीट्यूट ’ नामकी एक बड़ी इमारत दिखाई देती है । इस इमारत की बनावट यूरोपियन ढंगकी है; और इससे दिल्लीको एक नये प्रकारकी शोभा प्राप्त हो गई है । यहाँ वाचनालय, अजायबघर, म्यूनिसिपालिटी, इत्यादि सार्वजनिक संस्थाएँ हैं । ग्रामसंस्थाने इस इमारतको १,३५,४५७ रु. व्यय करके निर्म्माण किया है ।

“ दिल्ली इन्स्टीट्यूट ” के सामने चाँदनी चौकके एक ओर १२८ फुट ऊँचा एक सुंदर और दर्शनीय मीनार है । इस मीनारका नाम ‘ क्लाक टावर ’ है; और दिल्लीकी म्यूनीसिपालटीने २५,५०० रुपये खर्च करके उसको बनवाया है । इस मीनारसे चाँदनी-चौकको यद्यपि बहुत कुछ शोभा प्राप्त हुई है, तथापि मुगल बादशाहोंके प्राचीन मीनारोंकी बराबरी यह नहीं कर सकता । इस मीनारके शीर्षभागपर चारों ओर बड़ी बड़ी घड़ियाँ हैं । वे प्रत्येक पलमें, समर्थ रामदास स्वामीके शब्दोंमें, मानो दर्शकोंसे कह रही हैं कि, “ भाइयो, घटिकाएं निकल गईं, पल निकल गये; और घंटा टन टन बजता है । इसी तरहसे तुम्हारे जीवनका भी नाश हो रहा है । इस लिए इस संसारमें आकर परमात्माका नाम लो; और कुछ परोपकारका कार्य कर जाओ । ”

चाँदनी-चौकमें प्राचीन ऐतिहासिक स्थानोंमेंसे दो स्थान देखने लायक हैं ! एक रोशनुद्दौला की मसजिद; और दूसरा कोतवाली । रोशनुद्दौला की मसजिद सन १७२१ ईसवीमें, मुहम्मदशाह बादशाहके जमानेमें, रोशनुद्दौला जफरखानने बनवाई थी । यह मसजिद है तो छोटीही, परन्तु अत्यन्त कमनीय है । इसके गुम्बजपर सोनेके मुलम्मेका काम किया गया है, इसलिए इस मसजिदको सोनेकी मसजिद भी कहते हैं । नादिर-

शाहने जिस समय दिल्लीपर आक्रमण करके वहाँके लोगोंको कतल किया, उस समय उसने इसी मसजिदकी गच्चीपर खड़े होकर वहाँकी कतलका अवलोकन किया था! दीन प्रजाजनोंका करुणा-पूर्ण क्रन्दन सुनकर उसके हृदयमें रत्तीभर भी दया उत्पन्न न हुई! प्रत्युत, उनके रुधिरप्रवाहके साथही साथ उस नराधम नरपिशाचके हृदयमें आनन्दकी तरङ्गें उमड़ने लगी थीं!! ऐसे पुरुषोंके लिए 'मानवसृष्टिके राक्षस' से अधिक और क्या उपमा दी जा सकती है? इस स्थानके पास ही कोतवाली की इमारत है। हडसन साहबने सन् १८५७ ईसवी के बलवेके समय, बादशाहके पुत्रोंको मारकर, उनकी लाशें लोगोंको दिखलानेके लिए यहीं पर लाकर रक्खी थीं!! बलवेके समय यद्यपि यह स्थान रक्तकी बूँदोंसे कलङ्कित हो गया था, तथापि आजकल वहाँ शान्ति-देवीका पूर्ण साम्राज्य है।

दिल्लीके चाँदनी-चौकका अवलोकन करनेवालोंके मनमें वहाँके 'विक्टोरियाबाग' को देखनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। यह बाग अँग्रेजी ढँगपर लगाया गया है; और नगरनिवासियोंके विश्रामका वहां पूरा पूरा सुभीता किया गया है। इस उद्यानमें नेत्रोंका रंजन बहुत अच्छी तरह होता है। कर्णोंका रंजन होनेके लिए भी यहाँ पासही एक 'बैंडस्टैन्ड' की योजना की गई है। वहाँ हफ्तेमें नियत दिनोंपर सुन्दर वाद्य सुनाई देते हैं, जिन्हें सुनकर रंजनप्रिय जनसमुदायको बड़ा संतोष होता है। इस बागसे अलीमर्दानकी नहर बह रही है। इस जलाशयसे बागको विशेष शोभा प्राप्त हुई है। सुन्दर सरिता अथवा रमणीय सरोवर उद्यानश्रीके प्यारे क्रीड़ा-भवन हैं। इनके बिना उसके विलास पूरे नहीं होते! अस्तु।

इस बागमें पत्थरका एक हाथी है। उसके पैरोंके पास यह लेख खुदा है कि, शाहजहाँ बादशाह सन् १६४५ ईसवीमें ग्वालियरसे यह

हाथीकी मूर्ति लाया। इसके सिवा चाँदनी चौकमें और विशेष देखने लायक कुछ नहीं है।

काली मसजिद।

दिल्ली शहरके चाँदनी-चौकको देखनेके बाद दर्शक लोग शहरके दक्षिणमें काली मसाजिदकी इमारत देखनेके लिए उत्सुक होते हैं । यह मसाजिद काली है, इसीलिए उसको 'काली मसाजिद' नाम मिला है। यह 'तुर्कमन गेट' के समीप है। इस दरवाजेका नाम 'तुर्कमन' इसलिए पड़ा कि, यहाँ पर शाह तुर्कमन नामका एक प्राचीन औलिया रहता था। सन् १२४० ईसवीमें उसका देहावसान हुआ । यहाँ पर उसकी कबर है; और 'रज्जब' महीनेकी २४ वीं तारीखको यहाँ एक मेला लगता है। इसी पुरुषके कारण इस दरवाजेको 'तुर्कमन गेट' नाम प्राप्त हुआ है। अस्तु। काली मसजिदकी इमारत बहुत पुरानी है । यह सन् १३८६ ईसवीमें यानी फीरोजशाह तुगलकके समयमें बनी । बाहरसे यह इमारत दोमंजलीसी दिखाई देती है; परन्तु उसकी कुर्सी बहुत ऊँची है; और उसपर २८ फुटकी उँचाई पर प्रार्थनाका स्थान है। मसाजिदकी कुल उँचाई ६६ फुट है। इस मसाजिदका काम चौदहवीं शताब्दीकी शिल्प-कलाका दर्शक है । स्टीफन नामक एक महाशयने इसके सम्बन्धमें इस प्रकार लिखा है—"इस मसजिदकी कमानियों और अर्धगोलाकृत शीर्षभागकी रचना बड़ी विलक्षण है । इस इमारतके पत्थर एक अद्भुत प्रकारके चूनेमें जमाये गये हैं। यह इमारत चौदहवीं शताब्दीके कलाकौशलका नमूना है । दीवारोंपर लाल रंगकी जो जालियां हैं उनका बहुतसा भाग लापरवाहीके कारण लुप्त हो चला है। यह इमारत भड़कीली नहीं है, किन्तु बिलकुल सादी दिखाई देती है। बिशप हीबरने कहा है कि, "यह मसाजिद अरबी भाषाकी कथाओंमें वर्णित मसाजिदोंके नमूने पर बनी है।"

जैनमंदिर।

जुम्मा मसाजिदसे एक तंग-रास्ता जाता है । उस रास्ते पर एक ऊँचासा कोट दिखाई देने लगता है । यह जैनमंदिर है । इसका सभा-मंडप संगमर्मरका बना है। इस मन्दिरमें बुद्धकी मूर्ति हाथी-दांतके नक्काशीदार सिंहासनमें बैठाई गई है । यह मन्दिर भारतके अन्य जैनमंदिरोंके समान ही बनाया गया है । फर्ग्युसन जैसे साहबों-ने स्पष्ट स्वीकार किया है कि, शिल्पशास्त्रकी दृष्टिसे इस देवालयके कई एक भाग वर्णन करने योग्य हैं । ध्यानमें रखने लायक बात तो यह है कि, दिल्लीमें मुसलमानी बादशाहतके समयमें भी यह मन्दिर सुरक्षित बना रहा। इस प्राचीन जैनमंदिरसे यह सिद्ध होता है कि, किसी समयमें दिल्लीमें बौद्ध धर्म प्रचलित था । प्राचीन इतिहास-अन्वेषकोंको इस मंदिरका दर्शन विशेष महत्त्वका मालूम होता है। सर्वसाधारणको शायद यह विशेष आनन्ददायक न मालूम होगा।

चौथा प्रकरण।
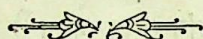
इन्द्रप्रस्थ।
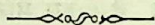
महाभारतकी कौरव-पांडवोंकी कथाओंने जिस इन्द्रप्रस्थका नाम अजर-अमर कर दिया है, और जिसका नाम हिन्दुओंने अनेक बार सुना है, वह सुप्रसिद्ध नगर दिल्लीके दक्षिणमें दो मीलकी दूरी पर है। यहाँ पांडवोंके समयकी धन-सम्पन्न नगरी अब नहीं है। सिर्फ मुसलमानी किलेका कुछ जीर्ण भाग और उसमें कुछ प्राचीन मसजिदें हैं। आजकल यहां पर न तो वे उत्तुंग देवालय हैं; और न वे रमणीय उद्यान। यहांकी निर्जन तथा उध्वस्त दशाको प्राप्त;—परंतु इतिहासकी दृष्टिसे अत्यंत पवित्र एवं महत्वपूर्ण—भूमिका अवलोकन करने पर प्रत्येक हिंदू दर्शकका हृदय गद्गद हो जाता है। यह सोच कर, कि हम पांडवोंके इन्द्रप्रस्थमें खड़े हैं, उसे बड़ा गौरव मालूम होता है; और उस सुंदर नगरीकी विपदावस्थाको देखकर उसे अत्यंत खेद होता है। पांडवोंकी पुण्यभूमि अवलोकन करनेकी उत्सुकतासे हृदयमें उठी हुई आनंद-तरंगें क्षणभरमें विलीन हो जाती हैं; और वहां जाते ही शोकका साम्राज्य हृदयमें छा जाता है। अस्तु। मनकी यह हालत हो जाती है, तथापि दर्शकोंको इस स्थानके देखनेकी जिज्ञासा विशेष रहती है, और दिल्ली जाने पर उसका अवलोकन किये बिना वे कदापि नहीं रहते।

इन्द्रप्रस्थ नगरका विस्तारपूर्वक वर्णन महाभारतमें दिया ही है। तो भी उसका थोड़ासा वृत्तांत यहां पर दे देना आवश्यक जान पड़ता है। इस नगरकी कथा इस प्रकार है:—

द्रौपदीका स्वयंवर होनेके बाद, उसके साथ पांडव हस्तिनापुरको रवाना हुए। तब कौरव-राज धृतराष्ट्रके मननें यह डर पैदा हुआ कि

ज्योंही ये हस्तिनापुरमें आवेंगे त्योंही राज्यके बँटवारेके लिए मेरे पुत्रोंमें और इनमें झगड़ा शुरू हो जायगा । इसका प्रतिबन्ध करनेके लिए उन्होंने विदुरके द्वारा धर्मराज युधिष्ठिरको यह संदेशा भेजा कि, तुम लोग हस्तिनापुरको न आकर वहाँसे थोड़ी ही दूर पर जो खांडव-वन अथवा इन्द्रवन नामक भारी जंगल है, उसको साफ करके वहाँ पर एक नया शहर बसाओ; और वहीं पर तुम अपने भाइयोंके साथ राज्य करो । धर्मराज धर्मराज ही थे । उन्होंने इस बातको एकदम स्वीकार कर लिया; और इंद्रवनको जला कर, तथा साफ करके, वहाँ पर एक बड़ा भारी नगर बसाया । इसीको इन्द्रप्रस्थ अथवा खांडवप्रस्थ नाम दिया गया । महाभारतमें आदिपर्वके २०७ वें अध्यायमें इस नगरका बहुत ही सुंदर वर्णन किया गया है । उससे जान पड़ता है कि, यह नगरी पृथ्वी पर मानो एक इन्द्रनगरीके ही समान थी । उसमें बड़े बड़े मनोहर उद्यान, जलाशय, इत्यादि बने थे । भवनोंकी शोभा अत्यन्त निराली थी । हाट, बाट, बाजार, चौक, इत्यादि अपनी सम्पत्ति और वैभवमें कुबेरपुरीको भी मात करते थे ।

सारांश यह है कि, यह नगरी ऐसी सुंदर और विलक्षण थी कि, कौरवोंसे पांडवों द्वारा मांगे गये ग्रामोंमें उसको अग्रस्थान प्राप्त हुआ था । पांडवोंने कौरवोंको यह समाचार भेजा थाः—

इन्द्रप्रस्थं वृकप्रस्थं जयन्तं वारणावतम् ।
देहि मे चतुरो ग्रामान् पंचमं किंचिदेव तु ॥

अर्थात् इन्द्रप्रस्थ, वृकप्रस्थ, जयन्त, वारणावत—ये चार गांव तो हमें अवश्य दो; फिर पाँचवाँ चाहे जौनसा दे दो । आखिर कौरवोंने पांडवोंको ये गांव न दिये । यही नहीं, किन्तु यहां तक कह दिया कि, हम तो तुम्हें उतनी मिट्टी भी न देंगे जितनी सुईकी नोक पर भी आ सके । उसका परिणाम भारतीय युद्ध है ।

इसी शहरमें पांडवोंने राजसूय यज्ञ सम्पन्न किया; और मयासुरकी बनाई हुई विचित्र सभा इसी शहरमें थी। इस नगरीका नाम महाभारतमें अनेकों बार आया है। इसके अतिरिक्त अन्य चार प्रस्थ भी सिर्फ नाम मात्रके लिए मौजूद हैं। उनके स्थान दर्शकोंको दिखलाये जाते हैं। इन प्रस्थों अथवा पतोंके नाम इस प्रकार हैः—पानीपत, सोनपत, तिलपत और बाधपत। ये सब दिल्लीके मैदानमें जमनाके पश्चिमी किनारे पर बसे हुए थे।

इन्द्रप्रस्थमें पांडवोंके समयकी नगरीका अब कुछ भी अंश शेष नहीं रहा है। तथापि इस स्थानकी पवित्रता अभी तक कायम है; और श्रद्धालु हिन्दू जनोंकी दृष्टिसे जो अत्यन्त पूज्य क्षेत्र हैं उनमें वह अभी तक गिना जाता है। पद्मपुराणमें इन्द्रप्रस्थकी महिमाका वर्णन करते हुए कहा हैः—

> यमुना सर्वसुलभा त्रिषु स्थानेषु दुर्लभा।
> इन्द्रप्रस्थे प्रयागे च सागरस्य च संगमे॥ १॥

अर्थात् "यमुना सर्वत्र सुलभ है, परन्तु इन्द्रप्रस्थ, प्रयाग और समुद्र-संगम, इन तीन स्थलोंमें दुर्लभ है।" वहाँ पर यमुनाके किनारे 'निगमोद्बोध' नामक तीर्थ तो बहुत प्रसिद्ध है; और वहाँ यात्रीगण जाया करते हैं। इस तीर्थके अतिरिक्त यहाँ पर छोटे छोटे तीर्थ और देवता अनेक हैं।

दिल्ली शहरसे जब हम इन्द्रप्रस्थ देखनेके लिए जाते हैं, तब पहले हमें 'लाल दरवाजा' नामक एक बहुत बड़ा प्राचीन दरवाजा मिलता है। यह शेरशाहकी राजधानीका एक प्रसिद्ध दरवाजा था। इस दरवाजेके सामनेकी ओर हुमायूँ बादशाहका बनवाया हुआ 'पुराना किला' देख पड़ता है। यही प्राचीन इन्द्रप्रस्थ है। इस किलेको हुमायूँ बादशाहने "दीने पनाह" नाम दिया था। हुमायूं जब इस किलेसे भाग

गया, तब उसके प्रतिपक्षी शेरशाहने इस किलेका नाम शेरगढ़ अथवा शाहगढ़ रखा था। प्रथमतः सन् १५३३ ईसवीमें हुमायूने इस किलेको बनवाना शुरू किया, और फिर इसके सात वर्ष बाद शेरशाहने उसके आसपास उत्तम कोट बनवाकर उसको सुशोभित कर दिया। इस कोटका घेरा लगभग एक मीलका है। इस किलेके मध्यभागमें, यानी इन्द्रप्रस्थकी भूमिपर, अब राजमन्दिरोंके सुवर्ण-कलश नहीं चमकते; बल्कि उस पुण्यभूमि पर आज अकिंचन जनोंकी पर्णकुटिकाएँ मात्र दृग्गोचर होती हैं!

इस किलेमें 'किलाकोना मसजिद' और 'शेरमन्दिल' नामकी दो प्राचीन दर्शनीय इमारतें हैं। इनमें पहली इमारत लाल रंग और संगमरमरके पत्थरकी बनी हुई है; और उसकी रचना बड़े कौशलकी है। यह पठान बादशाहके शासनकालमें, सन् १५४० ईसवीमें तैयार हुई। शिल्प-कला-विशारदोंकी दृष्टिसे इसकी रचना बहुतही श्रेष्ठ है; और हिन्दुस्तानकी शिल्पकलाके इतिहासके रचयिता मिस्टर फर्ग्युसनने इसकी मुक्तकंठसे प्रशंसा की है। उन्होंने लिखा है कि, इटलीके निवासी, जिस तरह वेनिसके 'कँपनॉइल' नामक अत्युच्च राजमहलको अपनी राजसत्ता तथा विजयवैभवका दर्शक समझते थे, उसी प्रकार पठान लोग इस मसजिदके अत्युच्च मीनारको, प्रार्थनामान्दिरका सिर्फ एक भाग ही न मानकर, अपने अभ्युदय और राजसत्ताका कीर्तिस्तंभ मानते थे। उनका धर्मोपदेशक इस मीनार परसे सब लोगोंको, प्रार्थनामें सम्मिलित होनेके लिए, बड़े ताल-सुरसे, पुकारा करता था। उस समय बादशाहको भी अपना काम-काज छोड़कर महलोंसे शीघ्र ही वहाँ जाना पड़ता था। हुमायूँ बादशाह इस मसजिदके निकट शेरमन्दिल नामक राज-प्रासादमें रहा करता था। एक दिन नियमानुसार काजी-जीने इस मीनार पर चढ़कर बादशाहको प्रार्थनाके लिए बुलाया। बाद-

शाह उसी समय जल्दी जल्दीमें उठकर दौड़ा, जिससे जीनेकी एक सीढ़ीसे उसका पैर फिसल पड़ा, उसे भयङ्कर चोट आई; और उसीमें सन् १५५६ ईसवीके जनवरी महीनेकी २६ वीं तारीखको उसका अन्त होगया !

इन्द्रप्रस्थमें दिखाई देनेवाले उपर्युक्त मुसलमानी ऐतिहासिक स्थानोंको अवलोकन करनेसे दर्शकोंको एक प्रकारका उद्वेगजनक दृश्य दिखाई देता है। जहाँ खड़े होकर अर्जुनने अपने गाण्डीव धनुषसे इन्द्रप्रस्थ नगरीके कोटकी रक्षा की, वहाँ अब 'किलाकोना मसाजिद' खड़ी हुई है ! जिस महलमें भगवान् श्रीकृष्ण और पांडवोंकी कल्याणकारी मंत्रणाएं हुआ करती थीं, उस महलके ठौर पर अब शेरमन्दिल अथवा शेरशाहका महल खड़ा है ! इस महलके सामने आजकल जो गिरी हुई जगह दिखाई दे रही है, उसी जगह राजसूय यज्ञका महोत्सव हुआ था, जिसका वृत्तान्त वहाँके लोग अब तक बतलाया करते हैं ! निस्सन्देह, विचारशील पुरुषके लिए इन्द्रप्रस्थका यह घोर परिवर्तन अत्यन्त विलक्षण है ! अहा ! कालचक्रकी महिमा कितनी अगाध है, सो हमें इन्द्रप्रस्थ नगरीके इस विपर्याससे अच्छी तरह मालूम होती है । जहाँ अनेक प्रकारकी राजनैतिक मंत्रणाएं हुईं; जहाँ अनेकों राज्य-क्रान्तियाँ हुईं; जहाँ लक्ष्मी मूर्तिमान् वास करती थी, जहाँके विषयमें कहा गया है किः—

रम्याश्च विविधास्तत्र पुष्करिण्यावनावृताः ।
तडागानि च रम्याणि बृहन्ति सुबहूनि च ॥ १ ॥

जहाँ रत्नोंका तेज चमकता था; और शस्त्रोंकी दिव्य ज्योति चमचमाती थी; वहाँ अब दो यवन-मन्दिर अपने गतवैभव पर शोक करते हुए खड़े हैं ! दिल्लीका 'पुराना किला,' अपने नामके अनुसार, पुराना होकर शनैः शनैः विनाशको प्राप्त हो रहा है; और वहाँका सारा भूप्रदेश

निर्जन होकर भयानक बन रहा है! अहा उसकी यह दशा देखकर किसका हृदय दुःखसे न भर जायगा? अहा! किसी सहृदय आंग्ल कविने क्या ही अच्छा कहा हैः—

"The Niobe of nations! There she stands,
Childless and crownless, in her voiceless woe,
An empty urn within her wither'd hands,
Whose holy dust was scatter'd long ago;
The *Pandawa's* tomb contains no ashes now;
The very sepulchres lie tenentless,
Of their heroic dwellers: dost thou flow,
Old *Jumna!* through a marble wilderness?
Rise, with thy *azure* waves, and mantle her distress."

अर्थात् हे दुखी राष्ट्र! आज तू पुत्रहीन और राज्य-श्री-हीन वर्तमान है। आज तेरे अधिकार में कोई भी वस्तु नहीं है। तेरी पवित्र सम्पत्ति शताब्दियों पूर्व नष्ट हो चुकी। पांडवोंकी समाधिकी राख भी बाकी नहीं है। उनका अपना भवन निर्जन पड़ा है। वहाँके शूरवीर निवासियोंका पता भी नहीं है। हे बूढ़ी जमना! क्या आज तू जनशून्य संगमरमर की पहाड़ियोंमें बहती है? उठ, खड़ी हो; और इसके दुखोंको दूर कर!

पांचवां प्रकरण ।
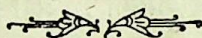
दिल्लीके आसपासके स्थान ।
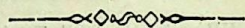
हुमायूँका मकबरा ।

इन्द्रप्रस्थ नगरी अथवा पुराने किलेका अवलोकन करनेके बाद यात्री-गण बहुधा हुमायूँ बादशाहकी कबर देखनेके लिए आते हैं। उस स्थलसे यह एक मीलके अन्तर पर है। वहाँसे इधर आते हुए बीच में 'लाल बंगला' नामकी एक इमारत मिलती है। यहाँ पर हुमायूँ और शाहआलम बादशाहकी रानियोंकी कबरें हैं। यहाँसे 'अरबकी सराय' नामकी एक छोटीसी बस्ती है। इसके दो दरवाजे दर्शनीय हैं। इस गांवको हुमायूँ बादशाहकी पत्नीने बसाया था। यहाँ पर अरब लोग रहा करते थे। इसी लिए इस स्थानका 'अरबकी सराय' नाम पड़ा है। यहाँसे हुमायूँ बादशाहकी कबर बिलकुल समीप है।

इस मकबरेमें प्रवेश करते समय दूसरे दरवाजेके पास एक लेख देख पड़ता है। उससे यह मालूम होता है कि, इस इमारतको हमीदा बानू बेगम, उर्फ हाजी बेगम, नामक हुमायूँ बादशाहकी रानीने, अपने पतिके स्मारकमें बनवाया। इस इमारतका काम सोलह वर्ष तक जारी रहा; और इसके बनवानेमें पन्द्रह लाख रुपया खर्च हुआ। स्वयं हमीदा बानू बेगम और राजघरानेके अन्य कई एक पुरुषोंकी कबरें भी यहीं पर हैं। यह इमारत मुगल बादशाहतकी बिलकुल प्रारम्भिक शिल्प-कलाका नमूना है। यह इमारत चौकोन है; और इसके चारों ओर अठपहलू कोने हैं। इसका मध्यभाग अठपहलू है; और उस पर एक अर्धगोलाकृति शिखर, अथवा गुम्बज है। उसके चारों ओर चार अठपहलू मीनार हैं। इस

इमारतका ढांचा अत्यन्त उत्तम है; और इसीके नमूने पर आगरेका ताज-महल बना है। इस इमारतमें और ताजमहलमें इतना अन्तर है, जितना एक ग्रामीण स्त्री और एक राजकुलकी रूप-ऐश्वर्य्य-संपन्न भुवनसुन्दरीमें होता है। ताजमहलमें जो कल्पनाशक्ति, कवित्व और प्रतिभा है, वह इसमें बिलकुल ही नहीं है। तो भी यह कबर बहुत अच्छी है; और अपनी सादगीसे ही दर्शकोंके चित्तको आकर्षित करती है।

हुमायूँ बादशाहकी कबरकी सादगीमें भी एक प्रकारका कौतुक है। अर्थात् वह सादगी अत्यन्त मनोरम और दर्शनीय है। सिकन्दरामें अकबरकी कबर और शहादरामें जहाँगीरकी कबर भी सादगीमें प्रसिद्ध है। परन्तु उनकी सादगीकी अपेक्षा इस इमारतकी सादगी अधिक मनोहारी है। इस इमारतमें ठौर ठौर पर संगमरमरका जो काम किया गया है, उससे इमारतकी शोभा और भी बढ़ गई है। पठान बादशाहोंने जो इमारतें बनवाईं, उनमेंसे कुतुब मीनारको छोड़कर, बाकी सब इमारतें, इस मुगल शिल्पकलाके पहले कामके आगे, रद हो जाती हैं। कनिंगहम साहबका कथन है कि, इस इमारतके शिल्प-कार्यमें प्राचीन शिल्प-कार्यकी अपेक्षा कुछ अधिक नवीन सुधार हुए हैं। वे सुधार ये हैं कि मुख्य इमारतके चारों कोनों पर चार सुन्दर मीनारोंकी इसमें कल्पना की गई है; और इमारतके गुम्बजोंकी बैठक चौड़ी नहीं की गई है। यह इमारत बहुत साफ और बड़ी है, अतएव दूरसे बहुत सुन्दर दिखाई देती है, परन्तु ताजमहल जैसा साफ और हवादार है, वैसी यह नहीं है।

ऊपर कहा जा चुका है कि, हुमायूँ बादशाहकी प्रिय पत्नी, महाप्रतापी अकबर बादशाहकी माता, हमीदा बानू बेगमने इस कबरको बनवाया, सो उसकी कबर भी इसी इमारतमें है। इस बेगमका अपने पति पर बड़ा प्रेम था; और इस लिए दर्शकोंकी दृष्टिमें वह यहां अपने पतिके सन्निध बराबर निवास करती है!

इसी इमारत में दारा, फर्रुखशियर, रफीउद्दौला, दूसरे आलमगीर, इत्यादि बादशाहोंकी कब्रें हैं। इन सबमें सिर्फ हुमायूँ बादशाहकी कबर ही विशेष हृदयाकर्षक दिखाई देती है। शेष कब्रें उन बादशाहोंकी योग्यताको देखते हुए बिलकुल ही साधारण हैं। सच है, जिन्होंने कुछ भी सुकर्म्म नहीं किये, जिनके शासनसे प्रजाका कल्याण नहीं हुआ, अथवा जिन्होंने दूसरोंके साथ थोड़ा भी उपकार नहीं किया, उनका स्मारक यदि धुँधला हो, तो इसमें कोई आश्चर्य्य नहीं है।

शेख निजामुद्दीन औलियाकी दरगाह।

दिल्लीमें शेख निजामुद्दीन औलियाकी दरगाह बहुत प्रसिद्ध है। शेख निजामुद्दीन औलिया मुहम्मद तुगलकके जमानेमें, सन् १३२१ ईसवीके लगभग, एक नामी साधु पुरुष हो गया है। यह महापुरुष अपने महान् साधुत्वके लिए प्रसिद्ध है। यह फरीदुद्दीन गुंजशक्कर नामक एक सुप्रसिद्ध औलियाका चेला था। गुंजशक्कर औलिया बड़ा अलौकिक पुरुष था। कहते हैं कि, यह साधु मंत्रके जोर पर मिट्टीके ढेलेकी शक्कर बना देता था। इस की गुरु-परम्परा अजमेरके मुईनुद्दीन चिश्ती नामक प्रसिद्ध साधु तक पहुँचती है। मुईनुद्दीन चिश्ती अजमेरमें मुसलमानोंका अत्यन्त वंद्य और परमपूज्य साधु था। यह परम्परासे निजमुद्दीनका चेला था। इस लिए लोगोंको इसमें बड़ी श्रद्धा थी। यह महापुरुष बड़ा दानशूर था; और उसका खर्च किसी राजासे भी अधिक रहा करता था। चाहे इस कारणसे हो कि, लोगों पर इसका बड़ा प्रभाव था; और चाहे अन्य किन्हीं कारणोंसे हो, तुगलक बादशाह इससे बहुत द्वेष करता था। इसलिए दिल्ली जाकर इस अवलियाके महत्त्वको सदाके लिए नष्ट कर देनेका उसने मनसूबा बाँधा। औलियाके शिष्योंको जब यह मालूम हुआ कि, बादशाह अपनी बड़ी भारी सेनाके साथ हमारे गुरुजी पर आक्रमण करनेके लिए आ रहा है, तब

वे गुरुजीके पास गये; और हाथ जोड़कर बोले, "महाराज, बादशाह आपसे नाराज है; और वह आप पर चढ़ाई करनेके लिए आ रहा है, अतएव आप शीघ्र ही दिल्लीको छोड़ दीजिए।" इस पर इस औलियाने अत्यन्त शान्तिके साथ उत्तर दिया कि, "दिल्ली दूर अस्त"— यानी दिल्ली अभी बहुत दूर है। जब बादशाह दिल्ली आ जायगा, तब देखा जायगा। चमत्कार यह हुआ कि, बादशाह दिल्ली आ ही न पाया। उसके दिल्ली आनेके पहले ही उसके पुत्रने उसका वध कर डाला!! भाविक और श्रद्धालु जनोंकी समझ है कि, बादशाह इस साधु पुरुषके प्राण हरण करनेकी दुष्ट बुद्धिसे आ रहा था, इसी लिए उसको यह प्रायश्चित्त मिला। स्लीमन साहबकी राय है कि, यह साधु ठगोंका नेता था; और उसीकी सम्मतिसे बादशाहका खून हुआ। जो हो, इसमें सन्देह नहीं कि, अब तक इस साधुके विषयमें लोगोंकी असीम श्रद्धा है; और उनकी दृष्टिसे वह बड़ा पूज्य है। इस साधुके कहे हुए 'दिल्ली दूर अस्त' ये शब्द आजकल इस कहावतके रूपमें बदल गये हैं कि, "दिल्ली दूर है।" अँगरेजीमें भी इसी अर्थकी एक कहावत है। वह यह है:—

'There is many a slip between the cup and the lip.'

अस्तु। यह साधु सन् १३२४ ईसवीमें, लगभग ब्यानवे वर्षका होकर, परलोक सिधारा। इस साधुकी कबर पर यह दरगाह बनी हुई है; इसी लिए इसको निजामुद्दीन औलियाकी दरगाह कहते हैं। यह दरगाह भी दिल्लीमें एक दर्शनीय स्थान है।

निजामुद्दीन औलियाकी दरगाहके पास एक छोटासा गांव बसा हुआ है, जहां प्रति वर्ष एक बड़ा भारी मेला हुआ करता है। दरगाहके प्रवेश-द्वार पर सन् १३७८ का सन् खुदा हुआ है। इसको फ़ीरोज-शाह तुगलकने बनवाया। इसके पास एक छोटासा तालाब है, जो

बहुत पुराना है । लोगोंका कहना है कि इस औलियाके शापसे उसका पानी खारा हो गया है ।

मुख्य दरवाजेसे अन्दर जानेपर कुछ छोटी छोटी कबरें और मसजिदें मिलती हैं । वहीं पर शाहजहाँ बादशाहकी पटरानी कोकिलादेवी (बाई) की कबर है । यह कबर बड़ी सुन्दर है । यहाँ पर पास ही एक बावड़ी है । उसका नाम 'चश्मे-दिलखुश' है ।

इस बावड़ी पर हिजरी सन् ७१३, यानी ईसवी सन् १३१२ खुदा है । यहाँ पानीमें एक मेहराब है । कहते हैं कि, उसके द्वारा भुँहारेके अन्दर पानी ले गये हैं । अस्तु । वहाँसे फिर दो दरवाजे मिलते हैं । उनसे जानेके बाद भीतर मुख्य दरवाजा मिलता है । यह इमारत दूरसे बहुतही सुन्दर दिखाई देती है । इसकी कमानियाँ, उनकी नक्काशी और मुख्य गुम्बज, सभी बहुत उत्तम हैं । यह इमारत बिलकुल मुसलमानोंके ताजियोंके समान है । इसके बीचोंबीच निजामुद्दीन औलियाकी मुख्य कबर है । यह कबर बहुत पुरानी है; और उसकी इमारत कुछ अकबरके जमानेमें और कुछ शाहजहाँके जमानेमें बनाई गई । यहाँकी मुख्य कबर पर जरीके कीमती वस्त्र और पुष्पमालाएं चढ़ाते हैं; और बहुतसे मुसलमान भक्तिपूर्वक वहाँ पर दान-धर्म करते हैं । यहाँपर औरङ्गजेब बादशाहने मजलिसखाना नामका एक महल बनाया है । इस इमारत पर कोई विशेष लेख खुदा हुआ नजर नहीं आता । परन्तु दो स्थानों पर "किब्लेगाह-ए-खास-ओ-आम" (सब लोगोंके लिए प्रार्थनाका स्थान) और "कबर-ए-शेख" (साधुकी कबर) लिखा है । यहाँका वार्षिक उत्सव देखने लायक होता है ।

निजामुद्दीन औलियाकी दरगाहके पास ही जमातखाना मसजिद नामकी एक दूसरी इमारत है । यह भी बड़ी सुन्दर और दर्शनीय है । कहते हैं कि, इसको खिजरखांने बनवाया था । यहाँकी कारीगरी भी

बहुत उत्तम है। इस इमारतके दरवाजे पर हिन्दू देवताओंकी भी मूर्तियाँ हैं। इमारतके मध्यभागमें एक सोनेका प्याला टँगा हुआ है। कहते हैं कि, यह बहुत पुराना है।

जहानारा बेगमकी कबर।

शेख निजामुद्दीन औलियाकी दरगाहके दक्षिणमें कई बड़े बड़े लोगों तथा राजकुलके नरनारियोंकी कबरें हैं। इन कबरोंमें शाहजहाँ बादशाहकी प्यारी बेटी जहानारा बेगम की कबर है। यह बड़ी पितृ-भक्त थी; और शाहजहाँके कैदमें रहते समय बराबर अन्त तक उसकी सेवामें रही। इसकी कबर बिलकुल सादी है; और उसपर कोई आच्छादन नहीं है, प्रत्युत, उसके मध्य-भागमें दूब लगानेके लिए जगह छोड़ दी गई है। इस कबरका मुख्य पत्थर छै फुट लम्बा है; और उसके ऊपर अरबी भाषामें "परमेश्वर ही जीवन और परमेश्वर ही पुनर्जन्म" लिखा है। उसके नीचे कुरानका साङ्केतिक अक्षर 'मिम्' लिखा है। उसके नीचे फारसी भाषामें निम्नलिखित अर्थका मजमून है:--

"Save the green herb, place naught above my head,
Such pall alone befits the lowly dead;
The fleeting poor Jehanarah lies here
Her sire was Shah Jahan and Chist her Pir,
My God the Ghazi monarch's proof make clear."

अर्थात् "सिवा हरी दूबके मेरे ऊपर—अर्थात् मेरी समाधि पर और कुछ न रखना। खाकसारके लिए यही काफी है। नश्वर और गरीब जहानारा यहाँ निवास करती है। उसके पितृ शाहजहाँ और गुरु चिश्ती थे। परमात्मा राजाके प्रमाणको और भी सिद्ध करे।" इस राजकन्याकी यह लीनता और रसिकता देखकर दर्शकोंको 'विनयो हि सतिव्रतम्' वाली उक्तिका स्मरण हो आता है; और वे क्षणभरके लिए कौतूहल-

सागरमें निमग्न होजाते हैं। इस कबरपर दिये गये सन्से जान पड़ता है कि, यह सन् १६८१ ईसवीमें बनाई गई।

जहानाराकी कबरके बाईं ओर शाहआलम बादशाहके लड़के मिर्जा अलीगोर, और दाहनी ओर अकबरशाहकी दूसरी बेटी जमीलुन्निसा की कबर है। इन कबरोंके पास, पूर्व ओर मुहम्मदशाह बादशाहकी कबर है। यह अभागी बादशाह सन् १७४८ ईसवीमें मृत्युको प्राप्त हुआ। मयूरसिंहासन पर बैठनेवाला अन्तिम बादशाह यही था। इसकी कबरके पास उसकी बेटीकी कबर है, जो नादिरशाहके बेटेको ब्याही थी। इस कबरका प्रवेशद्वार संगमरमर का बना है, और उसपर बेल-बूटोंका काम बहुत बढ़िया किया गया है। इसके नजदीक एक तीसरी कबर है, जो दूसरे अकबरशाहके लड़के शाहजादा जहाँगीर की है। यह लड़का पागल था। इसने दिल्लीके रेजीडेन्ट मिस्टर सेटन पर गोली चलाई थी, जिससे इसको इलाहाबादमें लाकर कैद किया था।

खुसरो कविकी कबर।

इन स्थानोंको देखनेके बाद, मुख्य आँगनमें आने पर, 'चबूतरा-यारानी' और खुसरो कविकी कबर, ये दो रमणीय स्थल दृष्टि पड़ते हैं। इनके सिवा, वहाँ पर और भी अनेक साधु-सन्तोंकी कबरें हैं। "चबूतरा-यारानी" पर निजामुद्दीन औलिया और उसके मित्र लोग बैठा करते थे। इसी लिए उसको 'मित्रोंका चबूतरा' नाम प्राप्त हो गया है। अमीर खुसरो हिन्दुस्तानका एक विख्यात कवि था। उसकी मधुर कविताके कारण उसे "मधुरभाषी तोता" नाम प्राप्त हुआ था। उसकी कबर पर 'अदीम्-उल-मिसल' यानी 'अद्वितीय पुरुष' ये शब्द भी लिखे हैं। इस नामसे फारसी भाषामें हिजरी सन् ७२५ सिद्ध होता है। यह उसकी मृत्युका सन् (१३२४ ईसवी) है। अमीर खुसरो निजा-मुद्दीनका प्रिय मित्र था। इसने मुहम्मद तुगलकके राजमहलमें चारों ओर

भ्रमण करके अनेकों प्रासादिक पद्य तैयार किये हैं। कवितादेवी उस पर पूर्ण प्रसन्न थी। तुगलक बादशाहके राजमहलमें गुजरातके राजाकी देवलदेवी नामकी एक लावण्यवती कन्या थी। कहते हैं कि, यही इस कविकी कवित्व-स्फूर्तिका मुख्य कारण है।

कहते हैं कि, इस सौन्दर्य्य-लतिका पर उसने बहुत सुन्दर कविताएँ बनाई हैं। इसकी कविताएँ बहुत प्रेमपूर्ण और मधुर हैं; और अब तक लोगोंके मुँहसे सुनी जाती हैं। हिन्दुस्तानमें अनेकों कवि हो गये हैं; और उनके काव्योंने उनकी कीर्तिको अमर कर दिया है; परन्तु उनकी कबरें या समाधियाँ बहुत ही कम दिखाई देती हैं। गीतगोविन्दके रचयिता कवि जयदेवकी समाधि पूर्व-प्रान्तमें सुनी जाती है; और कवि खुसरोकी कबर दिल्लीमें प्रत्यक्ष देखी जाती है। इनके सिवाय हिंदुस्तान के कवियोंके स्मारक-मन्दिर और कहीं भी नहीं पाये जाते। एक संस्कृत कविका सुभाषित है:—

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः।
नास्ति येषां यशःकाये जरामरणजं भयम्॥

अर्थात् उन रससिद्ध सुकृती कवीश्वरोंकी जय हो, कि जिनके यश-रूपी शरीरके लिए जरा और मरणका कभी भय नहीं है।

परन्तु इससे यह नहीं कहा जा सकता कि, हमारे कवियोंके लिए किसी प्रकारके स्मारककी आवश्यकता नहीं है। संस्कृत कवि कालिदास, भवभूति, दंडी, बाण अथवा हिन्दी कवि तुलसीदास, सूरदास, केशवदास, बिहारी, इत्यादिके नाम पर यदि आज कोई स्मारक होते, तो उनसे दर्शकोंको निस्सन्देह बहुत आनन्द हुआ होता! आज भी दिल्लीमें अमीर खुसरोकी मनोरम कबर देखनेसे जान पड़ता है कि, जैसे उसकी सुन्दरता दर्शकोंको, इस कविके काव्य-माधुर्यका स्मरण दिलानेके लिए, बुला रही है; और स्वयं कबरके भीतरी मंडपमें जाने पर ऐसा भास

होता है कि, मानो उससे निकलनेवाली मंजुल प्रतिध्वनि किसी संस्कृत कविकी वाणीमें यह कह रही है कि:—

वाणी ममैव सरसा यदि रंजयित्री
न प्रार्थये रसविदामवधानदानम् ।
सायंतनीषु मकरन्दवतीषु भृंगाः
किं मल्लिकासु परमंत्रणमारभन्ते ॥ १ ॥

अर्थात् मेरी कवितामें यदि रस है; और पढ़नेवालेको यदि उससे आनन्द होता है, तो मैं रसिक लोगोंसे उसकी तरफ़ ध्यान देनेकी, प्रार्थना नहीं करता । सायंकालको भौंरा पुष्परससे भरी हुई मल्लिकाकी तरफ आनेके लिए क्या किसीकी सलाह लेता है ?

अस्तु । कवि खुसरोकी कबरका दर्शन करके बाहर आनेके बाद थोड़ी ही दूर पर दौरानखां और आजमखां नामक दो प्रसिद्ध पुरुषोंकी कबरें हैं । इनके बाद वहाँ दो फुटके अन्तर पर 'चौंसठ खम्भा' नामक एक दरगाह मिलती है । इस इमारतमें चौंसठ खम्भे हैं । इसी लिए इसको 'चौंसठ खंभा' नाम प्राप्त हुआ है । इसकी बनावट और रचना शाहजहाँके समयकी इमारतोंके समान सुन्दर और मनोहारी है । इसे देखनेसे जान पड़ता है कि, मानो यह इमारत 'दीवान-ए खास' नामक सौन्दर्य्य-मन्दिरका पहलेका नमूना ही है । इस इमारतमें सब जगह बढ़िया संगमरमरका काम किया हुआ है । इसका आकार चौरस है । इस इमारतमें अकबर बादशाहके सेनापतिके लड़के अजीमखांकी कबर है । यह अजीमखां गुजरातका गवर्नर था । यह प्राचीन धर्म्मका कट्टर अभिमानी था, अतएव इसको अकबर बादशाहका नवीन धार्मिक सुधार पसन्द नहीं था । परन्तु अकबरने कभी उससे किसी प्रकारका आग्रह नहीं किया; और उसको उसके ही मतानुसार चलने दिया । यह मनुष्य बड़ा धर्मात्मा था; और गरीब-गुरबोंको सर्वदा अन्नदान किया करता, तथा मुहरें बाँटा करता था । इस लिए उसके विषयमें दिल्लीके गरीब

लोगोंमें इस अर्थकी एक कहावत प्रचलित हो रही है कि, " परोपकारी अजीमखां गरीबोंको सिर्फ भोजन ही नहीं देता, किन्तु साथही दाक्षिणा भी देता है।" निस्सन्देह, जो सज्जन अपने धनका उपयोग परोपकारमें करते हैं, उनकी कीर्ति अजरामर हो जाती है।

सफदर-जंगका मकबरा।

हुमायूँ बादशाहकी कबरसे अन्त तक जो रास्ता जाता है, उसके सिरे पर नवाब मनसूरखां उर्फ सफदरजंगकी कबर है। नवाब सफदरजङ्ग दिल्लीकी राजनीतिका एक प्रसिद्ध सूत्रधार था; और अयोध्याके पहले नवाब सआदतखांके बाद उसकी गद्दीका स्वामी हुआ। यह दिल्लीके बादशाह अहमदशाहका प्रधान मंत्री था, अतएव दिल्लीके राजनैतिक मामलोंमें इसका मुख्य हाथ रहता था। सन् १७५३ इसवीमें दिल्लीमें इसकी मृत्यु हुई। उसकी यह कबर उसके पुत्र, अयोध्याके तीसरे नबाब सुजाउद्दौलाने, तीन लाख रुपये खर्च करके, बनवाई है। इस इमारतमें सफदरजंगके साथ उसकी बेगमकी भी कबर है। इस कबरकी रचना ताजमहलके नमूने पर की गई है; और इसके मध्य-भागमें संगमरमरका काम, तथा उसमें लालरंगकी कारीगरी बहुत शोभायमान देख पड़ती है। इस इमारतके चारों कोने जितने सुन्दर होने चाहिए, उतने सुन्दर नहीं हैं—तोभी, इसमें सन्देह नहीं, कुल मसाजिद दर्शनीय है। इस इमारतके ऊपर चढ़कर देखनेसे आसपासका दृश्य बहुत ही मनोहर दिखाई देता है। यह इमारत ९९ फीट ऊँची है।

सफदरजंगके मकबरेसे कुछ अन्तर पर एक मार्ग जाता है। वहाँ 'हौज-ए-खास' नामका एक स्थान है। यहाँ पर पहले सुलतान अलाउद्दीन खिलजीके समयका एक प्राचीन तालाब था। वहाँ फीरोजशाह तुगलकने सन् १३५४ ईसवीमें एक विद्या-मन्दिर बनवाया था; जिसमें यूसुफ-बिन-फजल-हुसेनी नामके एक विद्वान् पुरुषको अध्यापक नियत

किया था । उसकी कबर अभी तक वहाँपर मौजूद है । उसके पास ही फीरोजशाहका मकबरा है । यह बादशाह सन् १३८८ ईसवीमें मृत्युको प्राप्त हुआ । अवश्य ही, यह कबर उसके बाद बनाई गई है ।

राजा जयसिंहकी वेधशाला ।

सफदरजंगके मकबरेसे पाँच मीलकी दूरीपर कुतुबमीनारकी इमारत है । यहाँसे 'अजमेरगेट' की ओर दूसरी सड़क जाती है । उसके दरमियानमें जयपुरके राजा जयसिंहकी वेधशाला है । यह अत्यन्त दर्शनीय है; और उस विद्वान् तथा ज्योतिष-शास्त्र-विशारद राजाका एक उत्तम स्मारक है । राजा सवाई जयसिंह हिंदुस्तानके इतिहासमें एक अद्वितीय रत्न था । यह राजा राजनीति, रणभूमि और पंडितोंकी सभामें एकसा चमकता था । वर्तमान जयपुर नगर इसी राजाने बनवाया; और वहाँपर अपनी राजधानी नियत की । दिल्लीके दरबारमें इसका अच्छा प्रभाव था; और मराठोंको "चौथ" तथा "सरदेशमुखी" की नदें दिलाने तथा उनके हितसाधन करनेका अधिकांश श्रेय इसीको है । बड़े बाजीराव पेशवाको मालवेकी सूबेदारी इसीने प्राप्त करा दी थी । इसने ज्योतिष-शास्त्रका अच्छा अध्ययन किया था; और उसके लिए उसने दिल्ली, उज्जैन, काशी, इत्यादि स्थानोंपर वेधशालाएँ बनाई हैं । 'कल्पद्रुम' इत्यादि इसके कुछ ग्रन्थ भी प्रसिद्ध हैं । ऐसे बहुगुण-सम्पन्न राजाकी इस वेधशालाको देख कर प्रत्येक दर्शकके हृदयमें आनन्दकी लहरें उमड़ने लगती हैं; और उसकी गुणग्राहकता पर बड़ा कौतूहल होता है ।

दिल्लीकी यह वेधशाला अभी तक अस्तित्वमें है । उसका असली नाम 'सम्राट्-यन्त्र' है । परन्तु यह नाम उच्चार करनेमें कठिन मालूम होता है; इसलिए आजकल इसको, "जंतर-मंतर" कहते हैं । यह वेधशाला सन् १७२४ ईसवीमें बनवाई गई । ग्रहोंका वेध लेनेके लिए जो शंकुयंत्र

तैयार किया गया है, वह ज़ीनेके आकारका है! उसका कर्ण ११८ फुट ५ इंच है। आधार उसका १०४ फुट और लम्ब ५६ फुट ७ इंच है। परन्तु अब यह इमारत बहुत खराब हो गई है। इस इमारतके पास एक छायायंत्र बनाया गया है। यह इमारत रोमन लोगोंके नाटकगृहके समान वृत्ताकार है; और उसके बीचमें एक ज़ीना है, जो बराबर छत तक चला गया है। चारों ओर, क्षितिजसे एक बिन्दुमें आनेवाली, अर्धवृत्ताकार कमानियाँ बनी हुई हैं। वे वेधशालाकी याम्योत्तर रेषामें एक विशिष्ट अन्तर पर हैं; और बगलकी याम्योत्तर रेषा दिखलाती हैं। ज्योतिष-शास्त्रज्ञोंको वेध लेनेके लिए जिन जिन शास्त्रीय साधनोंकी आवश्यकता होती है, उन सबका यहां अच्छी तरह प्रबन्ध किया गया है। यहाँ पर त्रिकोण और उसके अंश बहुत अच्छी तरह लगा रखे हैं, जिनसे दिनका काल-मापन ठीक ठीक होता है; और घटिकाओं तथा पलोंका भी ठीक ठीक बोध होता जाता है। इस प्रकारके दो छायायंत्र पास ही पास हैं, इससे जान पड़ता है कि, एकके मापनकी परीक्षा दूसरेमें की जाती होगी। इस वेध-शालासे, उसके रचयिताकी विशाल बुद्धि और ज्योतिषशास्त्र-पारंगतताका अच्छा अनुमान होता है। राजा जयसिंहके बाद इस वेध-शालाका वैसा उपयोग करनेवाला और कोई मनुष्य नहीं निकला; और इसी कारण इस वेधशालाकी बड़ी दुर्दशा हो रही है। तथापि जो जो विद्वान् पुरुष दिल्लीमें जाते हैं और इस छायाचित्र तथा वेधशाला-का दर्शन करते हैं, वे राजा सवाई जयसिंहकी तारीफ किये बिना नहीं रहते। वर्तमान समयमें यह इमारत, और उसके पासका माधवगंज नामक गांव, सवाई जयसिंहके वंशज, जयपुर रियासतके वर्तमान अधि-पति, महाराजाधिराज सर सवाई माधवसिंहके अधिकारमें है। आशा है, आप अपने पूर्वजोंके इस अत्युत्तम स्मारकको सुरक्षित रखेंगे। क्योंकि अपने पूर्वजोंकी कृतिकी रक्षा करना भी एक पवित्र कार्य है।

छठा प्रकरण ।

हिन्दू राजाओंके प्राचीन स्मारक ।

लोहस्तम्भ ।

जब हम कुतुबमीनार देखनेके लिए जाते हैं, तब वहाँके विस्तीर्ण भूप्रदेश पर हमें अनेक प्राचीन और जीर्ण किले, कोट और इमारतें दिखाई देने लगती हैं। ये सब उस समयके प्राचीन स्मारक-चिन्ह हैं, जब कि दिल्लीमें हिन्दू राजाओंकी स्वतंत्र राज्यसत्ता और राज्यवैभव मौजूद था। अब इसमें कुछ भी सन्देह नहीं रहा है कि, यहाँ पर उन शक राजाओंकी बृहत् राजधानी थी, कि जिनको ईसवी सन्के ७८ वें वर्षमें राजा विक्रम ने जीता था। यहाँके लोहस्तम्भसे मालूम होता है कि, सन् ३१९ ईसवीमें यहाँ गुप्त राजाओंकी राजधानी होगी। परन्तु इसके बाद, आठवीं शताब्दीके मध्य तक, अर्थात् तुंबरवंशीय राजा अनंगपाल तक, यहाँ राजधानी थी, अथवा नहीं-यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। कनिंगहम साहबके लेखसे यह जान पड़ता है कि, राजा अनंगपाल जब तक अवतीर्ण नहीं हुआ था, तब तक यह राजधानी विध्वंसावस्थामें थी। इससे जान पड़ता है, अनंगपालने इसे फिर बसाया। हां, प्राचीन ऐतिहासिक सामग्रीसे इतना अवश्य सिद्ध होता है कि, दिल्लीमें तुम्बर घरानेके राजाओंका राज्य अनेक वर्षों तक था। यहां तक कि, उनकी सत्ता हिमालयसे लेकर विंध्याचल पर्वत तक फैली हुई थी। इस समय जहां कुतुबमीनार और उसके आसपासका प्रदेश है, वहीं इन राजाओंकी नगरी थी। उन्होंने जो नगरी बसाई; और बादमें चौहान वंशके राजाओंने उसमें जो सुधार किये, उनका सम्पूर्ण स्वरूप आज दिखाई नहीं देता, परन्तु उनके जमानेके

कुछ स्मारक अब तक दिखाई पड़ते हैं, उनका संक्षिप्त वृत्तान्त यहाँ दिया जाता है।

यह लोहस्तम्भ भारत्की अपूर्व और अलौलिक वस्तुओंमेंसे एक है। हिन्दुस्तानमें आज तक पीतलकी बड़ी बड़ी मूर्तियाँ, और पंचधातुके छोटे-बड़े, सब प्रकारके, पुतले बहुतसे बने थे; परन्तु लोहरसका इतना बृहत् स्तम्भ अब तक किसीने तैयार नहीं किया था। वैज्ञानिक उन्नतिके वर्तमान युगमें ऐसे अद्भुत कार्य चाहे सहजहीमें हो जायँ; परन्तु आश्चर्य्य इस बातका है कि, इतने पुरातन कालमें हमारे भारत-वर्षमें ऐसे ऐसे अलौकिक कार्य हुए हैं! यह स्तम्भ अखंड है; और बिल-कुल लोहरसका बना हुआ है। इसकी कुल उँचाई २५ फुट है; और धरतीसे वह २२ फुट ऊँचा है। पहले लोग समझते थे कि, यह धरतीमें बहुत नीचे तक गड़ा है। परन्तु सन् १८७२ ईसवीमें प्राचीन-वस्तु-अन्वेषकोंने इसकी गहराईका, बड़ी सूक्ष्म दृष्टिसे, निरीक्षण करके यह निश्चित किया कि, इसकी गहराई सिर्फ तीन फुट है। उनका मत यह है कि, धरतीके भीतर, वृक्षोंकी जड़ें, जिस तरह नीचे नीचे जाकर वृक्षके तनेको मजबूत बनाती हैं; उसी तरह इस स्तंभके नीचे लोहेकी खपच्चियां लगाकर उसे पक्का बनाया है। इस स्तम्भका व्यास १६ इंच है। कुछ अन्वेषकोंका अनुमान है कि, इस स्तंभका वजन साढ़े सत्रह टनसे भी अधिक है। यह स्तम्भ शुद्ध लोहेका है; और उसका विशिष्ट-गुरुत्व ७·६६ है।

इस स्तम्भका मध्य भाग चिकना है; और उसपर निम्नलिखित संस्कृत लेख खुदा है:—

यस्योद्वर्तयतः प्रतीपमुरसा शत्रून्समेत्यागतान् ।
वंगेष्वाहववर्तिनोभिलिखिता खड्गेन कीर्तिर्भुजे ॥
तीर्त्वा सप्तमुखानि येन समरे सिंधोर्जिता वाल्हिका ।
यस्याद्याप्यधिवास्यते जलनिधिर्वीर्यानिलैर्दक्षिणः ॥ १ ॥

खिन्नस्येव विसृज्य गां नरपतेर्गामाश्रितस्येतराम् ।
मूर्त्या कर्मजितावनिं गतवतः कीर्त्या स्थितस्य क्षितौ ॥
शान्तस्येव महावने हुतभुजो यस्य प्रलापो महान् ।
अद्याप्युत्सृजाति प्रणाशितरिपोर्यत्नस्य शेषः क्षितिम् ॥ २ ॥
प्राप्तेन स्वभुजार्जितं च सुचिरं चैकाधिराज्यं क्षितौ ।
चन्द्राह्वेन समग्रचन्द्रसदृशीं वक्त्रश्रियं बिभ्रता ॥
तेनायं प्रणिधाय भूमिपतिना धावेन विष्णौ मतिं ।
प्रांशुर्विष्णुपदे गिरौ भगवतो विष्णोर्ध्वजः स्थापितः ॥ ३ ॥

ये तीन श्लोक, प्रत्येक पंक्तिमें दो चरणोंके क्रमसे, छै पंक्तियोंमें खुदे हैं। ऊपर लिखे हुए श्लोकोंका भावार्थ यह है कि, "यह स्तम्भ मानो उस चन्द्र नामके राजाका भुजही है कि, जिसने, वंग देशमें ऐक्य करके आक्रमण करनेवाले शत्रुओंकी, नाकमें दम करके, खड्गसे अपनी कीर्ति लिख रखी है। उस राजाने सिन्धु नदीके सप्तमुखोंको पार करके बाल्हिक लोगोंको जीता; दक्षिणीसमुद्र तो उसकी प्रताप-वायुसे अभी तक सुगन्धित हो रहा है। जैसे किसी बड़े भारी जंगलमें प्रज्ज्वलित प्रचंड बड़वानल, प्रायः समस्त जंगलको भस्मीभूत करके शान्त हो जाने पर भी, कुछ अवशिष्ट अवश्य रहता ही है, उसी प्रकार शत्रुओंकी चेष्टाओंको पूर्ण रीतिसे विफल करके, यद्यपि यह राजा खिन्नतासे इस पृथ्वीको छोड़ कर, मूर्तिमात्रसे, स्वपुण्यार्ज्जित स्वर्गलोकको चला गया है, तथापि कीर्तिरूपमें वह यहाँ अवश्य वर्तमान है। अपने भुजाओंके पराक्रमसे प्राप्त किया हुआ चक्रवर्तित्व जिसने चिरकाल तक भोगा; जिसके मुखकी कान्ति पौर्णिमाके चन्द्रके समान है, उस चन्द्रराजने, भगवान् विष्णुके प्रति अपने चित्तको भक्तिपूर्वक अर्पण करके, विष्णुपद नामक गिरि पर, भगवान् विष्णुका यह उच्च ध्वज स्थापित किया है।"

यह राजा चन्द्र कौन है, अथवा कब हुआ इसका अभी तक निर्णय नहीं हुआ है। इन श्लोकोंमेंसे अन्तिम श्लोकके तीसरे चरणमें 'धावेन'

शब्द है। उसके अर्थके विषयमें मतभेद है। कई लोगोंने 'धावेन' का अर्थ किया है–"'धाव' नामक राजाने", और कई लोगोंका मत है कि, 'धावेन' शब्दकी जगह 'भावेन' शब्द हो सकता है, जिसका अर्थ "भक्तिसे" होता है। ऐसी दशामें यही कहना पड़ता है कि, राजाके नामका निर्णय अभी सन्देहावस्थामें ही है।

इस लोहस्तम्भके विषयमें एक दन्तकथा पहले प्रकरणमें दी जा चुकी है। उसी तरहकी एक दन्तकथा और है। यह दंतकथा शाहजहाँ बादशाहके यहां रहनेवाले किसी खड्गराय नामक कविने लिखी है। उसका सारांश यह है कि, व्यास नामक किसी ऋषि, अथवा ब्राह्मणने, तोमर राजाको पच्चीस अंगुल लम्बी सोनेकी एक सलाई दी; और उसको, अच्छे मुहूर्त पर, जमीनमें गाड़ देनेके लिए कहा। तदनुसार उसने सम्वत् ७९२ (सन ७३६ ईसवीमें) वैशाख वद्य १३ को, अभिजित नक्षत्रमें चन्द्रके रहते समय, उसको जमीनमें गाड़ दिया। उस समय व्यासने उसको यह आशीर्वाद दिया कि, तुमसे राज्य कभी नहीं जायगा; यह खुंटी वासुकी के मस्तक पर गड़ी है।" परन्तु राजाने व्यासके इन वचनोंकी प्रतीति लेनेके लिए उस सलाईको उखाड़कर देखा, तो वह रक्तसे भरी हुई निकली! इस पर राजाने अत्यन्त भयभीत होकर उस ब्राह्मणको फिर बुलाया, और सारा समाचार प्रकट किया। उस समय ब्राह्मणने राजाको फिर उस सलाईको गाड़नेकी आज्ञा दी। तदनुसार राजाने उसको गाड़नेका प्रयत्न किया; परन्तु १९ अंगुलसे अधिक वह नहीं गड़ सकी। इस पर उस ब्राह्मणने कहा, "राजा, अब तुम्हारा राज्य बहुत दिन न टिकेगा। इस सलाईकी तरह वह अब ढीला हो गया। वह सिर्फ १९ वर्ष और टिकेगा। इसके बाद चौहान राजा होंगे, और फिर तुर्क लोग राज्य करेंगे।" ब्राह्मणका यह भाषण सुनकर राजा बड़ा संतप्त हुआ; और उस ब्राह्मणको बिदा किया। इसी प्रकारकी

दन्तकथाएं दिल्लीमें लोहस्तम्भ देखते समय सुननेमें आती हैं; जिनको सुन कर दर्शकोंको अत्यन्त कौतूहल मालूम होता है ।

लालकोट और रायपिथौरा ।

राजा अनंगपालके नामसे प्रसिद्ध होनेवाला उपर्युक्त लोहस्तम्भ देखकर दर्शकगण आश्चर्यचकित होते हैं कि, इतनेमें उनको चौहान राजाके समयके लालकोट और रायपिथौरा नामक प्राचीन किले दिखाई देने लगते हैं । ये दोनों इमारतें यद्यपि आज गिरी दशामें हैं, तथापि इनको देखकर चौहान राज्यसत्ताका अब भी स्मरण हो आता है । अहा ! कालकी क्या ही अतर्क्य लीला है ! इन किलोंमें आजकल बस्ती बिलकुलही नहीं है, अतएव नितान्त निर्जन और उदास दिखाई देते हैं । इनमेंसे लालकोटका किला पृथ्वीराजने बनवाया है । इस कोटके एक कोनेसे रायपिथौरा नामक किलेकी दीवारें स्पष्ट दिखाई देती हैं । लालकोट पृथ्वीराजकी राजधानीका कोट था; और उसको मजबूत बनानेके लिए फिरसे यह दूसरा किला बनाया गया था । लालकोट और रायपिथौराका विस्तार शाहजहानाबाद (नई दिल्ली) से करीब आधेसे अधिक था । लालकोटका घेरा सवा दो मील है, और उसकी दीवारें ऊँची तथा भारी हैं । उसका कोट तीस फुट ऊँचा है; और दीवारोंकी उँचाई कमसे कम साठ फुट थी । इस किलेका आधा भाग अब तक मौजूद है; और उसका खंदक तथा मारकेकी जगहें अच्छी दिखाई देती हैं । उसके बुर्ज प्रायः नष्ट हो गये हैं; तो भी कुछ बुर्जोंके चिन्ह स्पष्ट दिखाई देते हैं । पश्चिम ओर तीन दरवाजे तो अच्छी तरह पहचाने जा सकते हैं; और जान पड़ता है, उनकी चौड़ाई १७ फुट होगी ।

कहते हैं कि, रायपिथौरा नामक किला मुसलमानोंकी पहली चढ़ाईके बाद पृथ्वीराजने बनवाया । इस किलेका घेरा साढ़े चार मील था । परन्तु यह इमारत चूंकि कुछ जल्दी-जल्दीमें बनवाई गई, अतएव,

जितनी चाहिए, उतनी मजबूत यह नहीं बन सकी, तथापि कहते हैं कि, यह किला बहुत भारी था; और उसमें दस दरवाजे थे। उनमेंसे आठ दरवाजोंका अब भी पता लगता है। इस किलेमें हिन्दुओं और बौद्धोंके मिलाकर कुल सत्ताईस मन्दिर थे। उनके हजारों खम्भे और कलश हिन्दू धर्म्मका द्वेष करनेवाले यवन बादशाहोंने छिन्नविच्छिन्न कर दिये! हां, उनका दीन स्वरूप अब भी अपने दुर्भाग्यके लिए रो रहा है!

दिल्लीके लालकोटकी तैयारीके विषयमें एक स्थानपर संवत् १११७ का उल्लेख है, जिससे जान पड़ता है कि, यह सन् १०६० ईसवीमें बनवाया गया। इसके बाद रायपिथौरा किला बनाया गया। राजा पृथ्वीराज प्राचीन हिन्दू राजाओंमें श्रेष्ठ थे; और भाट लोगोंने उनके पराक्रमका विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। इस विषयमें चन्द नामक राजपूत भाट (कवि) का 'पृथ्वीराजरासो' बहुत प्रसिद्ध है।

सातवाँ प्रकरण।
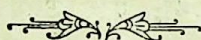
कुतुबमीनार।

भारतमें जो अलौकिक और विचित्र इमारतें पाई जाती हैं, उन्हींमें कुतुबमीनार भी एक है। यह गगनचुम्बित अत्युत्तम इमारत दिल्लीसे ग्यारह मील दूर है। इस इमारतको भूकम्प और विद्युत्-आघातसे यद्यपि थोड़ासा धक्का पहुँचा है, तथापि उन आघातोंसे भी सुरक्षित रहकर वह अब तक अपनी अपूर्वतासे समस्त संसारको चकित कर रही है। यदि पेरिसका 'एफेल टावर' नामक लोहेका मीनार, जो पेरिस-प्रदर्शनीके समय हालहीमें बनाया गया है, छोड़ दिया जाय, तो सारे संसारमें इस मीनारके बराबर ऊँचा मीनार नहीं है। यह इमारत जमीनसे २३८ फुट १ इञ्च ऊँची है। उसके निचले भागका व्यास ४७ फुट २ इंच और शीर्षभागका व्यास ९ फुट है। इस मीनारका बिलकुल निचला खंड २ फुट ऊँची कुर्सी पर है, बीचकी इमारत २३४ फुट १ इंच ऊँची है; और अन्तिम गुम्बजकी उँचाई २ फुट है। इस प्रकार कुल मिलाकर उपर्युक्त २३८ फीट १ इंचकी उँचाई होती है। कहते हैं कि, पहले यह मीनार ३०० फुट ऊँचा था; और कुल सात खंडका था। परन्तु आजकल, उसके बिलकुल अन्तिम खंड सहित, उसमें केवल पांच ही खंड हैं।

कुतुबमीनारकी इमारत मुसलमान बादशाहोंने बनवाई है; परन्तु यह बृहत् कार्य मुसलमान कारीगरोंने किया, अथवा हिंदू कारीगरोंने किया, यह एक बड़ा भारी प्रश्न है। गजनीके महमूदने जिस तरह मथुराके राजमहलका सामान और सोमनाथके मन्दिरके दरवाजे गजनी ले जाकर अपना महल सुशोभित किया, उसी तरह संभव है कि, इस

मीनारका बहुत सा नक्काशीका काम हिन्दू देवालयोंसे लिया गया हो। यदि यह बात सच है, तो इस इमारतके शिल्पकौशलका बहुतसा श्रेय हिन्दू कारीगरोंको भी देना होगा। कलकत्तेके प्रसिद्ध प्राक्कालीन-वस्तु-अन्वेषक डा० राजेन्द्रलाल मित्रने पिछले दिनों इस विषयमें वाद उपस्थित किया था; और उन्होंने यह सिद्ध किया था कि, यह अलौकिक इमारत हिन्दुओंके कलाकौशलका ही स्मारक है। इस मीनार पर कुछ नागरी अक्षर खुदे हुए हैं, इससे भी इस बातकी पुष्टि होती है कि, इसकी रचनामें हिन्दू शिल्पकारोंका हाथ था। अस्तु। इसकी रचनाके विषयमें कुछ भी मतभेद क्यों न हो, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि, यह इमारत भारतके लिए अवश्य ही एक गौरव का कारण है।

कुतुबमीनार सन १३२५ ईसवीमें पूरा हुआ। इससे मालूम होता है कि, यह इमारत लगभग छे सौ वर्षसे दिल्लीकी राज्यक्रान्तियों और उथला-पथलोंका अवलोकन कर रही है। अतएव इस इतिहासप्रसिद्ध इमारतको देखकर प्रत्येक मनुष्यको, उसके विषयमें अभिमान और आदर-भाव मालूम होता है।

कुतुबमीनारकी अत्युच्च इमारत पर खड़े होकर, आसपास दृष्टि डालनेसे, दस कोस विस्तारवाले प्राचीन दिल्ली शहरकी सैकड़ों विध्वंसित इमारतें दृष्टिगोचर होती हैं; जिनको देखनेसे यह मालूम होता है कि, मानो यह कुतुबमीनार, यह दिखलानेके लिए, कि देखो मैं कैसा सबमें श्रेष्ठ हूँ, बड़ी शानके साथ खड़ा है! उसकी विशाल रचना, उसकी सुन्दर नक्काशी, उसका भव्य स्वरूप, और उसकी कायदेकी उँचाई, देखकर दर्शकोंको आनन्द और आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता। सारे संसारकी कबरोंमें जिस तरह आगरेका ताजमहल श्रेष्ठ है, उसी प्रकार सारे मीनारोंमें दिल्लीका कुतुबमीनार श्रेष्ठ है। जिस तरह ताजमहलका अप्रतिम सौन्दर्य्य देखकर रसिक दर्शकोंको अत्यन्त हर्ष होता है; और

६

आश्चर्यके कारण वे यह नहीं सोच सकते कि, "ताजमहल हृदयमें रखें, अथवा हृदय ही ताजमहलमें रख दें"—बस यही हाल यहां भी दर्शकोंका होता है। कुतुबमीनारकी इमारत एक बार देख लेने पर फिर हमें कभी उसका विस्मरण नहीं हो सकता। मतलब यह है कि, यह इमारत संसारमें एक अपूर्व वस्तु है। पेरिसका 'एफेल टावर' नामक मीनार लोहेका है, अतएव उसकी बात हम नहीं कहते; किन्तु अलेक्जें-न्ड्रियाका पाम्पीका जयस्तम्भ, केरोकी हसनकी मसजिदका मीनार, अथवा सेंटपीटर्सवर्ग (वर्तमान पेट्रोग्राड) का 'अलेक्जेन्ड्राइन कालम' इत्यादि सब अत्यन्त ऊंची ऊंची इमारतोंको कुतुबमीनारके आगे अपना मस्तक झुकाना पड़ेगा।

यह मीनार यद्यपि इतना ऊँचा है, तथापि उसके भीतरका जीना बहुत अच्छा है। पाँचों खंडोंमें सब मिलाकर कुल ३७६ सीढ़ियाँ हैं। भीतरकी ओर वायु और प्रकाशकी यथायोग्य सुविधा है, और प्रत्येक खंड पर गैलरियाँ बनी हुई हैं, अतएव दर्शकोंको बड़ा आराम रहता है। प्रत्येक खंड पर गैलरी होनेके कारण ऐसा जान पड़ता है कि, मानों इस इमारतमें ठौर ठौर पर कमरबन्द कसे हैं। इससे इमा-रतको विशेष शोभा प्राप्त हुई है। इसके अतिरिक्त इस इमारत पर अनेक शिल्प-लेख भी हैं, जिनमें कुरानके वाक्य और परमेश्वरकी नाम-मालिका दी हुई है। इससे इस इमारतके बनानेवालोंकी ईश्वरभक्तिका अच्छा परिचय मिलता है।

कुतुबुद्दीनकी मसजिद।

कुतुबमीनारके पास कुतुबुद्दीन बादशाहकी बनवाई हुई एक पुरानी मसजिद है। यह मसजिद उस समयका बिलकुल पहला स्मारक है, जब कि मुसलमानी धर्म्मका भारतवर्षमें प्रवेश हुआ। यह मसजिद, तथा इसके आसपासकी इमारतें, कुतुबुद्दीन, शमसुद्दीन अल्तमश और

अलाउद्दीन खिलजी नामक तीन बादशाहोंके शासन-कालमें बनाई गई हैं। कुतुबुद्दीनकी मसजिदका नाम 'कुवत-उल्-इसलाम' है, जिसका अर्थ "इस्लाम धर्म्मकी शक्ति" है। इस मसजिदकी लम्बाई १५० फुट और चौड़ाई ७५ फुट है। इसके पूर्व और उत्तरके दरवाजे अभी तक कायम हैं; और उनके शिला-लेख स्पष्ट दिखाई देते हैं। यह इमारत, हिन्दू तथा जैनमन्दिरोंको तोड़ कर, उन्हींकी सामग्रीसे बनाई गई है। इस लिए यह स्पष्ट जान पड़ता है; कि, इसके प्रत्येक खम्भे पर जो नक्काशी है, वह हिन्दुओंकी है। इन खम्भोंके बेलबूटे, पुष्पमालाएँ, और नाना प्रकारकी सुन्दर आकृतियाँ देखने लायक हैं। विशेषतः, इस मसजिदके उत्तरकी ओरकी दालानमें बहुत ही बढ़िया नक्काशी की हुई है। इस सम्पूर्ण हिन्दू शिल्पकार्यके वर्तमान स्वरूपको देखकर अत्यन्त खेद होता है! इस सम्पूर्ण इमारतको एक बार देखनेसे ऐसा भास होता है कि, इसके सब खम्भे और बेलबूटेदार पत्थर, जो पहले हिन्दू मन्दिरोंमें रामकृष्णका भजन-पूजन देखते हुए आनन्दसे वास करते थे, वे यहाँ पर अत्याचारपूर्व्वक लाये जाने तथा मुसलमानी धर्म्मकी दीक्षा दिये जानेके कारण, मानो शोक सा कर रहे हैं! हिन्दुओं तथा जैनियोंकी मूर्त्तियां इस इमारतमें न देख पड़ें—इस लिए उन पर चूनेका बढ़िया मुलम्मा चढ़ाकर उनका स्वरूप बिलकुल बदल दिया गया था; परन्तु काल-गतिसे वह चूनेका पलास्तर जीर्ण हो गया; और वे अदृश्य मूर्तियां अब धीरे धीरे दिखाई देने लगी हैं! यहां पर यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि, हिन्दुओंकी मूर्त्तियों पर आये हुए पटल कालान्तरसे आप ही आप नष्ट होगये; और उनका पहलेका स्वरूप व्यक्त हो गया! क्योंकि, हमारे हिन्दू धर्म्मका यह विशेष गुण ही है कि, उस पर चाहे जितने सङ्कट आवें, पर-धर्म्मके कितने ही पटल उस पर आकर क्यों न जम जायँ, तथापि उसका असली उज्वल स्वरूप कभी नष्ट नहीं हो

सकता । इसी अद्वितीय गुणके कारण, हमारा हिन्दू धर्म्म, मुसलमानोंके धर्मोन्मादकी कुछ भी परवा न करते हुए, बराबर टिका रहा । अस्तु । इस मसजिदमें एक स्थान पर कृष्णजन्मका भी एक चित्र है; और एक सवत्सा धेनुका चित्र है । ये दोनों चित्र भी देखने लायक हैं ।

इस मसाजिदके प्रति मुसलमानोंका पहले ही से बड़ा पूज्य-भाव है । कई मुसलमान इतिहासकारों और प्रवासियोंने इसका वर्णन किया है; और उसमें यह भी स्पष्टतापूर्व्वक स्वीकार किया है कि, यहाँ पर पहले हिन्दुओंका देवालय था । इब्नबटुटा नामक प्रवासीने इसके विषयमें यह लिखा है:—

" Its mosque is very large, and in beauty and extent has no equal. Before the taking of Delhi it had been a Hindu temple. "

अर्थात् " यह मसाजिद बहुत बड़ी है; और सौन्दर्य तथा विस्तारमें अपना सानी नहीं रखती । दिल्लीके हस्तगत करनेके पहले यहां हिन्दुओं का मन्दिर था । "

खुसरो कविने इस मसाजिद का इस प्रकार वर्णन किया है:—

"The mosque of it is the despository of the grace of god.
The music of the prayer of it reaches to the sky. "

अर्थात् मसजिद क्या है, परमात्माके अनुग्रहका निवासस्थान है । वहाँकी प्रार्थना स्वर्ग तक जाती है ।

अस्तु । इस स्थानके पास सुल्तान शमसुद्दीन अल्तमशकी कबर है । वह बड़ी सुन्दर है; और उसका प्राचीन हिन्दू-शिल्पकार्य अत्यन्त दर्शनीय है । इसके विषयमें मि० फर्ग्युसनने लिखा है कि, " यह इमारत यद्यपि छोटी है, तथापि हिन्दू कारीगरोंके कौशलका यह अप्रतिम नमूना है; और पाचीन दिल्लीकी दर्शनीय इमारतोंमें भी यह अग्रगण्य

है।" इस कबरके अतिरिक्त यहाँ 'अलाई दरवाजा' नामक एक सुन्दर दरवाजा भी है, जिसकी नक्काशी अत्यन्त प्रशंसनीय है। कुतुब मीनार, कुतुबुद्दीनकी मसाजिद, अल्तमशकी कबर और अलाई दरवाजा, ये सब इमारतें पठान राजाओंके समयकी हैं; और निस्सन्देह प्रशंसनीय हैं। बिशप हीबर नामक कुतूहलप्रिय प्रवासीने पठानोंकी उपर्युक्त इमारतोंको देखकर कहा है कि, "इन पठान राजाओंने राक्षसके समान इमारतें बनाई हैं; और उनकी नक्काशी रत्नकारके समान सुन्दर की है।" यह कथन यहाँ अक्षरशः सत्य प्रतीत होता है।

उपर्युक्त इमारतोंके अतिरिक्त दिल्लीमें फीरोजाबाद, तुगलकाबाद, बेगमपुर, आदि अनेक प्राचीन और इतिहासप्रसिद्ध स्थान हैं। वहाँ पर भी मसजिदें और कबरें बहुत हैं। इनके सिवाय, सन् १८५७ के बलवेमें जिन अँग्रेज वीरोंने शूरता दिखलाकर रणभूमिमें अपने प्राण दिये, उनकी कबरें, स्मारकस्तम्भ, इत्यादि अनेक अर्वाचीन बातें भी देखने योग्य हैं। इन सभीका वर्णन इस छोटीसी पुस्तकमें नहीं दिया जा सकता। तथापि, ये सभी स्थल दिल्ली जानेवाले दर्शकोंके देखने योग्य हैं।

अस्तु। इसमें सन्देह नहीं कि, दिल्ली अथवा इन्द्रप्रस्थका यह पुराण-प्रसिद्ध और इतिहास-प्रसिद्ध स्थल देखकर यह अच्छी तरह मालूम हो जाता है कि, काल-चक्रकी गति कितनी विचित्र है। जहाँ हिन्दू राजाओं-की स्वतंत्रता और राज्यसत्ता चमक रही थी, वहाँ काल-चक्रकी गतिसे मुसलमानोंका राज्य आया; बादको जब मुसल्मानी राज्यसत्ताका वैभव भी अपनी चरम सीमा तक पहुँच चुका, तब मराठोंका प्रभुत्व प्रस्थापित हुआ। इसके बाद मराठोंकी सत्ता भी न रही; और ब्रिटिश राज्यसत्ता यहां आकर संस्थापित हुई! इससे साफ मालूम होता है कि, राष्ट्रके उत्थान और पतनका चक्र बराबर जारी है! जो हो, दिल्ली अथवा इन्द्रप्रस्थ नगरका जब हम ऐतिहासिक दृष्टिसे अवलोकन करते हैं तब

हमें कविकुलगुरु कालिदासके इस कथनकी सत्यता भली भांति प्रतीत हो जाती है कि:—

" नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण । "

एक प्राचीन आंग्ल कविने भी राष्ट्रोंके उत्थान और पतनके विषयमें ऐसा ही कहा है । वह कहता है:—

" Empires and nations flourish and decay,
By turns command and in their turns obey."

अर्थात् " संसारका नियम है कि, बारी बारीसे सब राष्ट्रों और साम्राज्यों-का उत्थान तथा पतन होता रहता है । क्रमशः वे दूसरों पर शासन करते, और फिर दूसरोंका शासन माननेके लिए बाध्य होते हैं ! "

अस्तु । अँगरेजी राज्यमें भी हमारी इस बृद्धा दिल्ली माताने पूरा पूरा गौरव प्राप्त किया है । महारानी विक्टोरिया और महाराज सप्तम एडवर्डके राज्यारोहणसम्बन्धी महोत्सव इस दिल्लीमें ही बड़ी धूमधामसे सुसम्पन्न हुए । बादको सन् १९१२ ई० में सम्राट पंचम जार्जने, स्वयं इस पवित्र भूमिमें पधार कर, इसे फिरसे इसका गौरवपूर्ण राजधानी-पद प्रदान किया; और अपने राज्यारोहणका अपूर्व उत्सव यहां सुशोभित कराके भारतवासियोंको आनन्दित किया । तबसे दिल्ली राजधानीका राजनैतिक महत्व, वर्तमान समयमें भी, दिन पर दिन बढ़ ही रहा है; और आशा है कि, स्वातंत्र्यप्रिय ब्रिटिश साम्राज्यके द्वारा, दिल्ली राजधानीको एक बार फिर स्वराज्यशासनका गौरव प्राप्त होगा !

परिशिष्ट (क)
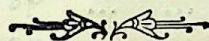
दिल्लीके प्राचीन राजा।
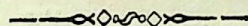
राजाका नाम			शासनकी अवधि वर्ष	मास	दिन
१ राजा युधिष्ठिर	...	...	३३	८	२५
२ राजा परीक्षित	...	...	६०	१	०
३ राजा जन्मेजय	....	...	४८	५	२७
४ राजा अश्वमेध	...	...	८२	८	२४
५ राजा धर्म ...	...	...	८८	२	८
६ राजा मनजित...	...	...	८१	११	२४
७ राजा जसरथ	...	...	७५	८	८
८ राजा दीपपाल	...	...	७५	१०	१८
९ राजा उग्रसेन ...	...	...	७७	७	२४
१० राजा सूरसेन ...	...	...	७९	८	६
११ राजा भूपति ...	....	...	६१	५	२
१२ राजा रणजित...	...	...	६५	१०	२९
१३ राजा वीरजित	....	...	६४	७	३
१४ राजा भीमसेन	...	...	५५	८	२९
१५ राजा शुकमलदेव	...	...	६२	०	३
१६ राजा नरहरिदेव	...	...	६१	१०	४
१७ राजा सुजितरथ	...	...	७२	११	३
१८ राजा शूर ...	...	...	५८	०	८

राजाका नाम	वर्ष	मास	दिन
१९ राजा पर्वत	५०	८	२१
२० राजा मधुकरशाह	५२	४	७
२१ राजा टोडरमल	४८	१०	२९
२२ राजा भीष्मदेव	४७	१०	२९
२३ राजा नरहरिरथ	४७	११	०
२४ राजा पूर्णमल	४४	८	१७
२५ राजा सारंगदेव	५६	०	०
२६ राजा रूप	५४	१०	२
२७ राजा अभिमन्यु	५१	११	८
२८ राजा धनपाल...	४८	७	४
२९ राजा भीम	५८	५	१५
३० राजा लखमीदेव	४८	११	२१
कुल	१८५२	११	

इसके बाद लखमीदेवके प्रधान वीरसेनने लखमीदेवको मारकर राज्य ले लिया । उसके वंशजः—

	वर्ष	मास	दिन
१ राजा वीरसेन	१७	७	०
२ राजा सूरसेन	३२	८	०
३ राजा अनन्तशाह	३७	८	२३
४ राजा वीरशाह	३२	१०	७
५ राजा हरिरूप....	३५	९	१७
६ राजा सुलोचन	४३	१	४
७ राजा पर्वत	४२	९	२४
८ राजा सुरपाल	३८	२	५

राजाका नाम	बर्ष	मास	दिन
९ राजा कृप	३५	४	१४
१० राजा पृथ्वीपाल	३१	८	११
कुल	३४७	९	२६

इसके बाद पृथ्वीपालके मंत्री नरहरिनाथने पृथ्वीपालको मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशजः—

राजाका नाम	बर्ष	मास	दिन
१ राजा नरहरिनाथ	१५	१०	८
२ राजा जेतसिंह...	२७	७	१५
३ राजा बैरामगत	२१	२	१३
४ राजा दीपपाल	३५	४	१
५ राजा महाबल...	३५	८	७
६ राजा अमृतपाल	२८	८	१०
७ राजा जेतपाल	२८	११	१०
८ राजा माणिकचन्द	२९	७	२१
९ राजा कामचन्द	३२	५	१०
१० राजा हरगौण...	१७	०	११
११ राजा जीवनगौण	२३	९	२७
१२ राजा रीभ्यवंग...	१३	७	२९
१३ राजा त्रिविक्रम	१०	२	१०
१४ राजा भारमल...	२३	११	२४
१५ राजा भूपति	१०	२	२
१६ राजा उदितकंठ	३५	२	२०
कुल	३८९	६	८

इसके बाद उदितकंठके 'मंत्री'ने उसको मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशजः—

राजाका नाम			वर्ष	मास	दिन
१ राजा मंत्री (?)	...	...	२४	२	०
२ राजा चन्द्रपाल	...	...	१६	९	२४
३ राजा सुन्दरपाल	...	...	२१	४	१८
४ राजा देशपाल...	...	...	१९	१	११
५ राजा रसिकपाल	...	...	१८	०	१२
६ राजा अनन्तपाल	...	...	१८	०	२२
७ राजा रामपाल...	...	...	३७	११	१२
८ राजा गोविंदपाल	....	...	२८	७	२७
९ राजा भीमपाल	...	...	१६	१०	१३
१० राजा अमृतपाल	...	...	१६	७	१९
११ राजा हलपाल	...	...	१२	५	२७
१२ राजा भूपपाल	...	...	१४	९	२२
१३ राजा हरिपाल	...	...	१३	८	४
१४ राजा मदनपाल	...	....	१७	७	१९
१५ राजा कर्णपाल	...	...	१५	२	२५
१६ राजा विक्रमपाल	...	...	१९	११	१३
		कुल	३११	५	८

राजा विक्रमपालको उसके वजीर संआदतखांने मारकर राज्य छीन लिया

इसके बाद दिल्लीमें बड़ी गड़बड़ी मची; फिर सोलह पुरुषोंने राज्य किया। उनके नाम:—

राजाका नाम	वर्ष	मास	दिन
१ सआदतखां	२४	०	०
(इस सआदतखांको मारकर विक्रमाजितने राज्य ले लिया ।)			
२ विक्रमाजित	३३	०	०
३ मुल्लकचन्द	०	२	२
४ विक्रमचन्द	१२	७	१९
५ कुलचन्द	०	२	२
६ रामचन्द	१३	११	७
७ कल्याणचन्द	१०	५	४
८ श्रीचन्द	१४	९	१४
९ सूरचन्द	२६	३	२१
१० भीमचन्द	१६	३	१
११ गोविन्दचन्द	२१	७	१२
१२ भावति	१	०	०
१३ प्रतिमल	७	५	१९
१४ गोविन्द	२०	२	१७
१५ पूर्णप्रेम	७	७	१९
१६ महानन्द	१५	७	१८
कुल	२२५	३	५

इसके बाद निम्नलिखित बारह राजाओं ने राज्य किया:—

राजाका नाम	वर्ष	मास	दिन
१ राजा जयसिंह	१८	५	२१
२ राजा मालुसेन...	१२	४	१२
३ राजा शूरसेन	१५	७	१२
४ राजा गन्धर्वसेन	११	३	१३

राजाका नाम	वर्ष	मास	दिन
५ राजा देवसेन	१०	१	५
६ राजा भूसेन	५	१०	५
७ राजा कल्याणसेन	४	८	२१
८ राजा हरिसेन	१२	०	२५
९ राजा ब्रह्मसेन	८	११	५
१० राजा नारायणसेन	५	२	१८
११ राजा लखमीसेन	१६	७	१५
१२ राजा दामोदरसेन	११	५	१६
कुल	१३२	८	१८

इसके बाद माधवसिंह उत्तर ओरसे आया; और उसने दामोदरको मारकर उसका राज्य ले लिया। उसके वंशजः—

राजाका नाम	वर्ष	मास	दिन
१ राजा माधवसिंह	१७	१०	६
२ राजा दीलसेन	१४	५	०
३ राजा राजसिंह	१२	३	२४
४ राजा शेरसिंह	१०	८	११
५ राजा बीरसिंह	२५	०	१५
६ राजा नृपसिंह	८	०	४
कुल	८८	४	०

इसके बाद नृपसिंहको राजा धीरन्धरने मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशजः—

राजाका नाम	वर्ष	मास	दिन
१ राजा धीरन्धर	२२	७	०
२ राजा सेन	३५	१०	९

राजाका नाम	वर्ष	मास	दिन
३ राजा लालजी	३५	२	८
४ राजा महानु	२०	३	९
५ राजा बीरनाथ	२८	५	२५
६ राजा जीवन	२२	२	२५
७ राजा उदयसिंह...	२७	४	२९
८ राजा कुलानन्द...	२२	३	८
९ राजा राजपाल	१३	२	६
कुल	२२७	५	२९

इसके बाद पृथ्वीपाल पूर्व ओरसे आया; और उसने राजपालको मारकर राज्य ले लिया। उसके वंशजः—

	वर्ष	मास	दिन
१ राजा पृथ्वीपाल...	१४	७	१७
२ राजा उजनपाल	१२	७	१३
३ राजा उदयपाल	१३	७	१४
४ राजा चैनपाल	१९	२	१९
५ राय पिथौरा उर्फ पृथ्वीराज चौहान	३६	४	२५
कुल	६५	४	२८

परिशिष्ट (ख)

दिल्लीके बादशाह ।

गोरी घराना ।

१ शहाबुद्दीन मुहम्मद ई० स० ११८६–१२०६

गुलाम घराना ।

२ कुतुबुद्दीन	,,	१२०६–१२१०
३ शमसुद्दीन अल्तमश...	,,	१२१०–१२३५
४ सुलताना रजिया	,,	१२३६–१२३९
५ मोहजुद्दीन बहराम	,,	१२३९–१२४१
६ अलाउद्दीन मसऊद	,,	१२४१–१२४३
७ नासिरुद्दीन महमूद	,,	१२४३–१२६६
८ बलबन	,,	१२६६–१२८६
९ कैकुबाद	,,	१२८६–१२८८

खिलजी घराना ।

१० जलालुद्दीन	,,	१२८९–१२९५
११ अलाउद्दीन	,,	१२९६–१३१६
१२ मुबारिक	,,	१३१६–१३२०

तुगलक घराना ।

१३ गयासुद्दीन	,,	१३२०–१३२६
१४ मुहम्मद	,,	१३२६–१३५१

१५ फीरोजशाह ... ... „ १३५१–१३८८
१६ गयासुद्दीन (दूसरा) ... ... „ १३८८–१३८९
१७ अबू बकर ... ... „ १३८९–१३९०
१८ मुहम्मद ... ... „ १३९०–१३९४
१९ हुमायूं ... ... „ १३९४–
२० महमूद ... ... „ १३९४–१४१४

सैयद घराना।

२१ खिजरखां (तैमूरलंगका दीवान) ... „ १४१४–१४२७
२२ मुबारिक ... ... „ १४२७–१४३५
२३ मुहम्मद ... ... „ १४३५–१४४५
२४ अलाउद्दीन ... ... „ १४४५–१४५०

लोदी घराना।

२५ बहलोलखां ... ... „ १४५०–१४८८
२६ सिकन्दर .... „ १४८८–१५१७
२७ इब्राहीम ... ... „ १५१७–१५२५

मुगल घराना।

२८ बाबर ... ... „ १५२६–१५३०
२९ हुमायूं ... ... { „ १५३०–१५४० फिर १५५५–१५५६ }
३० अकबर ... ... „ १५५६–१६०५
३१ जहांगीर ... ... „ १६०५–१६२७
३२ शाहजहां ... ... „ १६२७–१६५८
३३ औरंगजेब ... ... „ १६५८–१७०७
३४ बहादुरशाह ... ... „ १७०७–१७१२

३५ जहांदारशाह	... ... ,,	१७१२–१७१३
३६ फर्रुखशियर	.... ,,	१७१३–१७१९
३७ मुहम्मदशाह	... ... ,,	१७१९–१७४८
३८ अहमदशाह	... ... ,,	१७४८–१७५४
३९ आलमगीर (दूसरा)	... ... ,,	१७५४–१७५९
४० शाह आलम	... ... ,,	१७५९–१८०६
४१ अकबरशाह	... ... ,,	१८०६–१८३७
४२ बहादुरशाह	... ... ,,	१८३७–१८५७